अमर ज्ञान – ऋंखला १२

पहाड़ी खेती: किसानों का परम्परागत विज्ञान

विजय जड़धारी

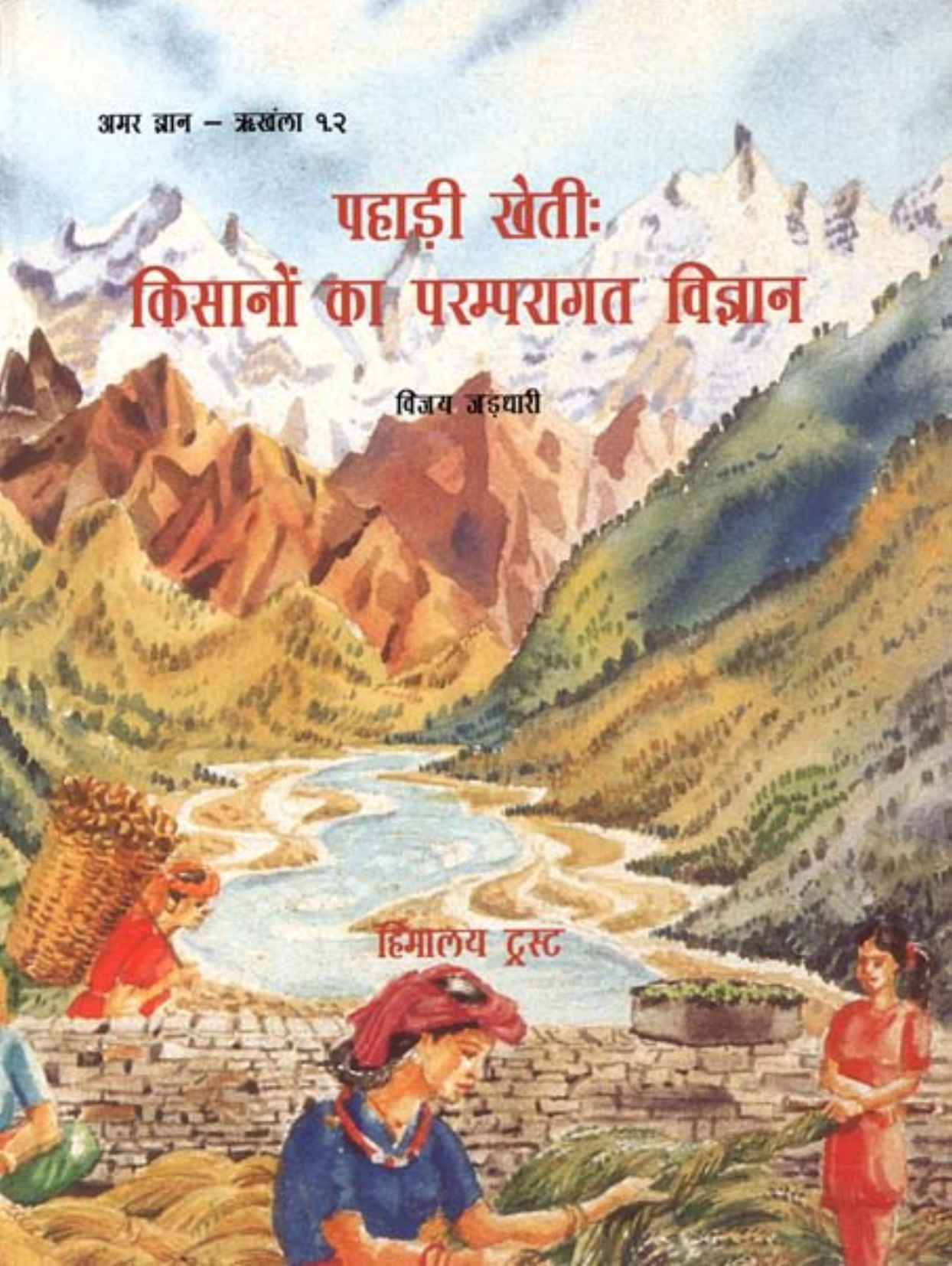

हिमालय ट्रस्ट

काली हरियाली

जन समुदाय पर खदानों के आने का प्रभाव

झारखण्ड के आदिवासियों के लिए मौखिक साक्षात्कार परियोजना

संकलन, अनुवाद व लेखन
सोनल वर्मा

पैनोस इंस्टीट्यूट

पैनोस इंस्टीट्यूट
49, फ़र्स्ट फ़्लोर
डिफ़ेंस कॉलोनी मेन मार्किट
नई दिल्ली-110024 (भारत)

प्रथम संस्करण, अक्टूबर 2002

संपादक व लेखक
सोनल वर्मा

प्रकाशक
पैनोस साऊथ एशिया

आर्थिक समर्थन - CIDA

मुख पृष्ठ
झारखण्ड आदिवासियों की पारंपरिक दीवार सज्जा का विनोद चौहान द्वारा रेखांकन

छायाचित्र
श्री जस्टिन इमाम, फ़ादर टोनी हर्बर्ट तथा सि. बीना स्टैनिस

यह पुस्तक पैनोस व प्रेरणा के सहयोग के परिणामस्वरूप तैयार हुई है।

पैनोस साउथ एशिया द्वारा प्रकाशित

पैनोस

मौखिक साक्षात्कार परियोजना

पैनोस इन्स्टीट्यूट्स् ऐसी विश्वव्यापी गैर सरकारी संस्थाएँ हैं जिनका उद्देश्य है विकास के प्रमुख मुद्दों पर सार्वजनिक वादविवाद व चर्चा को बढावा देना। पैनोस साऊथ एशिया तथा पैनोस लंदन इन्हीं का हिस्सा हैं। संसार भर में होने वाली विकास प्रक्रियाओं से जिन लोगों के जीवन सर्वाधिक प्रभावित हुए हैं, पैनोस उन लोगों की आवाज को बीच मंच पर लाना चाहते हैं ताकि निर्णय व नीति-निर्माण प्रणाली में उनका प्रतिनिधित्व और भागीदारी बढ़ सके।

इसके तहद् पैनोस ने प्रेरणा के सहयोग से झारखण्ड के हजारीबाग जिले में कोयला खदानों के आने से विस्थापित हुए जनसमुदायों के बीच एक मौखिक साक्षात्कार परियोजना का संचालन किया। खदानों से लोगों पर आर्थिक प्रभाव तो पड़ा है ही, साथ साथ यह भी सामने आया है कि विस्थापना और पुनर्वास के सबसे दीर्घकालीन प्रभाव सामाजिक और सांस्कृतिक होते हैं - जैसे पारम्परिक सामाजिक रिश्तों और ढाँचों का ढहना, सांस्कृतिक पहचानों का मिटना और लोगों की जीविका और उनके पर्यावरण के बीच के संबधों का टूटना। यह परियोजना विस्थापित लोगों के स्वरों को सुनने का और उनके जीवन को बेहतर बनाने के लिए खनिज निकालने की श्रेष्ठ पद्धतियों को ढूँढने का एक प्रयास है।

यह परियोजना विकास प्रेरित पुनर्वास पर एक अंतर्राष्ट्रीय मौखिक साक्षात्कार परियोजना का हिस्सा है जिसका उद्देश्य है विभिन्न देशों और संदर्भों में विस्थापित लोगों के स्वरों को सुनना और उनके अनुभवों से सीख लेना। पैनोस ने लिसोथो, बोत्स्वाना, ज़ैम्बिया, कीन्या तथा पाकिस्तान में भी प्रशिक्षण तथा कार्य किया हैं ताकि पुनर्वास के अनुभवों तथा उसके पीढ़ी दर पीढ़ी होने वाले अच्छे या बुरे प्रभाव की गहन व बृहद जानकारी मिल सके।

खदानों के आने से ...

दाँव पर लगा इनका भविष्य...

प्रस्तावना

खदानों के आने से औपचारिक स्तर पर, अथवा कह लीजिए कि पब्लिक रूप में क्या होता है यह तो प्रत्यक्ष है- कानून बनना, कार्यान्वित होना, तथ्य और आंकड़े, उपद्रव, संगठित आंदोलन, फिर उसमें राजनीतिज्ञों का दखल, इत्यादि। इन बातों की तो सार्वजनिक जानकारी सबके सामने है। लेकिन खदानों के आने से एक असर और होता है जो अंदरूनी है और जिसका आमतौर पर लोगों को पता नहीं है। अंदरूनी से अभिप्राय है प्रभावित जनसमुदाय के अंतरमानस में होने वाले परिवर्तन, उनके निजी जीवनों पर पड़ने वाले प्रभाव, उनकी संस्कृति तथा समाज पर विकास की छाप, उनकी सामूहिक चेतना में उठने वाले सवाल और सामूहिक पहचान में बदलाव आने से होने वाली कठिनाइयाँ। ये वो असर हैं जिनका ब्यौरा लेना या हिसाब लगाना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन है। यह कोई घटना क्रम नहीं है जिसका इतिहास बनाया जा सके। यह तो जीते जागते इंसानों की भावनाएँ हैं जो अपनी जानी पहचानी, सदियों से चलती आ रही परम्परागत जीवन शैली के बिलकुल ही पलट जाने का असर आज और अभी अपने ऊपर महसूस कर रहे हैं।

झारखण्ड में खदानों के आने का पहला और सबसे गहरा असर पड़ा है **विस्थापना।**

सदियों से यहाँ के आदिवासी/ जनजातियाँ / समुदाय जिस ज़मीन के मालिक थे, खेतीबाड़ी कर के उसे जोत आबाद कर रहे थे, अचानक वह ज़मीन उनकी नहीं रही। उन्हें नकद मुआवजा दे कर उनकी ज़मीन कोयला खदानों के लिए अधिग्रहित कर ली गई। एक ही झटके में उनके पास न खेती बाड़ी रही, न रहने के लिए घर। बदले में उन्हें नकद मुआवज़ा मिला और नीति अनुसार नौकरी भी दी गई, लेकिन नीतियों को लागू करने में जो गड़बड़झाला हुआ वह इन साक्षात्कारों से साफ हो जाता है। पुनर्वास कराने के इरादे भी गलत नहीं थे और इसके अंतर्गत आदर्श बस्तियाँ बनाने के वादे भी किए गए जहाँ बिजली, पानी, घर, स्कूल, अस्पताल, इत्यादि, सब मुहैया कराया जाना था। किंतु जो वास्तविकता है उसको ये साक्षात्कार स्पष्ट कर देते हैं। हर साक्षात्कार देने वाले की राय में उनकी पहली वाली जगह पुनर्वास स्थल से कई गुना बेहतर थी।

दूसरा असर हुआ कि लोगों की **पारम्परिक जीविकाओं के आधार खत्म** हो गए। खेती बाड़ी खत्म हो जाने से लोग अब केवल नौकरी या मजदूरी पर निर्भर हैं। नौकरी भी यूँ दी गई कि जिनकी ज़्यादा ज़मीन थी या जो बेहतर आर्थिक स्थिति होने के कारण अधिक पढ़े लिखे थे, उन्हे नौकरियाँ आसानी से मिल गईं। जो पहले से ही, कम ज़मीन वाले निर्धन किसान थे, या अनपढ़ थे उन्हें नौकरी में मुश्किल हुई। नतीजा यह हुआ कि ग़रीब पहले से और ग़रीब हो गया। जो पहले अपनी थोड़ी बहुत ज़मीन पर खेती कर लेता था या जो दूसरे किसानों के साथ अधबँटाई कर के घर में साल भर खाने लायक अनाज ले आता था, वही आज बिलकुल बेरोज़गार हो गया है या जैसे तैसे मज़दूरी कर अपना पालन पोषण कर रहा है।

दूसरा पारंपरिक जीविका का साधन था पशु पालन, जो कि खदानों के आने

से लगभग असंभव हो गया है। पानी का स्तर खदानों के कारण गिर गया है इसलिए तालाब कुओं में पानी नहीं है। चरगाह, वन और बंजर भूमि जहाँ पशु चरते थे, वह भी नहीं बचे। खदानों में ब्लास्टिंग होने की वजह से पशु मारे जाते हैं। पुनर्वास कॉलोनियों में इतनी जगह ही नहीं दी गई है कि मुर्गी पालन भी किया जा सके। बैल, इत्यादि, पालने का कोई मतलब ही नहीं बनता क्योंकि यह खेती से संबंधित है और खेती अब रही नहीं। इसलिए पशु पालन भी समाप्त हो गया।

आदिवासियों के लिए वन तथा वृक्ष भी जीविका के महत्वपूर्ण साधन थे। वन से बहुत मुफ्त सामग्री ऐसी मिलती थी जिसे बाज़ार में न खरीदने से पैसे की बचत हो जाती थी, जैसे जलावन, दातुन, इमारती लकड़ी, खाद्य सामग्री, इत्यादि। कई फल, साग, लकड़ी, घास और उससे बनी हुई चीज़ें बेच कर भी काफ़ी कमाई हो जाती थी जो कि बिलकुल बंद हो गई है। वन में शिकार भी होता था जो अब नहीं होता। महुआ, इत्यादि पेड़ों से पेट भी भरता था और आमदनी भी बहुत थी जो कि भारी मात्रा में इन पेड़ों के कट जाने से बिलकुल खत्म हो गई है। तो खदान क्षेत्रों में वनों की भारी कटाई - सफाई से पर्यावरण पर जो प्रभाव पड़ा है, वह तो अध्ययन का विषय है ही, साथ ही साथ इसका आर्थिक असर भी उतना ही गंभीर है। तो एक बहुत बड़ा असर यहाँ के जन समुदाय पर जो हुआ वह ये कि जल, जंगल, ज़मीन से उनका संबंध खत्म हो गया।

खदानों के आने का एक अप्रत्याशित प्रभाव जो पड़ा वह था **पारम्परिक समाज व संस्कृति का बिखर जाना**। हर साक्षात्कार देने वाले ने अपनी सामूहिक दुर्दशा का सबसे बड़ा ज़िम्मेदार आपसी फूट तथा मतभेद को माना है। इतनी बड़ी परियोजना की परछाई में छिप कर आए घूस, दलाली, धोखाधड़ी, प्रलोभन, लालच, फूट, इत्यादि

ने उन पारम्परिक संस्थाओं पर भी दाग लगा दिया जिन पर अब तक भारतीय गाँवों की जनता को सहज व गहरा विश्वास था- पंचायत , मुखिया व अन्य पदाधिकारी। एक पूरे समाज का अपने नेताओं पर से भरोसा उठ गया है।

दूसरी बड़ी चीज जो खो गई वह है पारिवारिक संबंध और समर्थन। वही तीन एकड़ ज़मीन जिस पर पहले एक बाप के तीन बेटे खेतीबाड़ी कर के जीते थे अब केवल एक बेटे को नौकरी दिलवा पाने के लिए काफ़ी है। ऐसे में संयुक्त परिवार भी खत्म हो चला है। नौकरी के विषय में एक चिंता सबको यह भी है कि नौकरी तो आज है कल नहीं। ज़मीन या खेतीबाड़ी होती तो अगली पीढ़ी उसी से जीती खाती। अब बच्चों के लिए क्या छोड़ के जाएँ? अगली पीढ़ी कैसे रहेगी? बच्चों का क्या भविष्य होगा? यह सवाल कई लोगों के वर्तमान को अंधकारमय बना रहा है।

विस्थापित हो जाने से, खेती बाड़ी खत्म हो जाने से लोग अपनी पहचान खो रहे हैं। कल तक जो अपने आप को रैयत कहने में गर्व महसूस करते थे वे आज समझ नहीं पा रहे हैं कि वे क्या हैं। दो संवेदनशील समूह ऐसे हैं जिन पर इस बात का बहुत गहरा असर पड़ा है और वे हैं महिलाएँ और वृद्ध। वे महिलाएँ जो कल तक खेतों में पुरुषों के साथ बराबरी का कार्य करती थीं वे आज पुनर्वास स्थलों के छोटे छोटे घरों में बंद रहती हैं। लेकिन एक बात जो अनपेक्षित रूप से सामने आई है वह है आंदोलनों में महिला शक्ति और सामर्थ्य का जम कर प्रदर्शन जिससे महिलाएँ काफ़ी संतुष्ट हैं। किंतु यह शक्ति दिशाहीन हो कर बेकार जा रही है।

विस्थापना का सीधा असर पारंपरिक सांस्कृतिक प्रथाओं पर भी पड़ा है। खदानों के आने से जनसमुदायों का शायद पहली बार बाहर के लोगों से विस्तार से संपर्क हुआ है जो कई तरह के प्रभाव ला रहा है। रहन सहन, खान पान, बात चीत,

पहनावा ओढ़ावा, पर्व त्योहार, सब कुछ बदल रहे हैं। यह स्वाभाविक भी है किन्तु इसकी कीमत चुकानी पड़ रही है पारम्परिक प्रथाओं और प्रचलनों को। वृद्ध और प्रौढ़ लोग अपने आप को बेकार और नाकारा महसूस कर रहे हैं। वही व्यक्ति जो बूढ़ा होने तक एक व्यस्त किसान बना रहता था आज 50-52 वर्ष की आयु में ही घर पर बैठा है क्योंकि उसकी ज़मीन के बदले में उसका बेटा नौकरी कर रहा है। ग़रीबी और बेराज़गारी का दबाव बराबर बढ़ता ही जा रहा है।

खदान क्षेत्रों में रहने वाले जन समुदायों के जीवन का हर स्तम्भ ढह सा गया है। जल, ज़मीन, जंगल से उनका प्राकृतिक संबंध टूट गया है। समाज का मूल ढाँचा चटक गया है। संयुक्त परिवार का सहारा, गाँव के प्रमुखों पर विश्वास, सामूहिक विचार-विमर्श तथा निर्णय, गहरा आपसी सहयोग, पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही गाँव और ज़मीन से जुड़ी उनकी पहचान जैसी मूल धारणाएँ जो उनके जीवन की परिभाषा थीं, ये सब टूट कर बिखरती जा रही हैं। क्रोध, क्षोभ, मजबूरी और लाचारी का एक चक्र संपूर्ण सामूहिक चेतना में चल रहा है और एक पूरा समाज दिनोंदिन हताशा और निराशा की ओर अग्रसर होता जा रहा है। इसका सबसे प्रत्यक्ष लक्षण है नशे की बढ़ती हुई आदत जिसका ज़िक्र कई साक्षात्कारों में है। अमूमन सभी की मनोवैज्ञानिक स्थिति नकारात्मक ही है।

प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस परिस्थिति के लिए खदानों का आना ज़िम्मेदार माना जाएगा। खदानों के कारण होने वाले आर्थिक सीमांतीकरण, सामाजिक असंगति व सांस्कृतिक निर्धनता के बीच जो संबंध है उसको नोट किया जा रहा है। समाधान आसान नहीं है क्यों विकास होना आवश्यक है और खदानें विकास का ही एक हिस्सा हैं। किंतु इन क्षेत्रों में रहने वाले जनसमुदाय भी इसी राष्ट्र का हिस्सा

हैं जिसके विकास व प्रगति के लिए खदानें अहम् हैं। किसी भी एक की कीमत पर दूसरे को बढ़ावा नहीं दिया जा सकता। इस समय सबसे बड़ी, सबसे अहम् प्राथमिकता है खनिज पदार्थ निकालने की ऐसी श्रेष्ठ पद्धतियों की खोज जो विकास की अनिवार्यता और जन समुदायों की जीवन शैली के बीच सामंजस्य बना सके, और फिर इन पद्धतियों का तत्काल लागू होना। इसके लिए ज़रूरी है जनसमुदायों की जीवन शैली, प्रचलन व प्रथाओं को गहनता से समझा जाए ताकि इनकी अधिक प्रभावशाली ढंग से सहायता की जा सके। खदानों के आने से प्रभावित लोगों के मौखिक साक्षात्कारों का इस प्रकार पुस्तक के रूप में संकलन इसी दिशा में एक प्रयास है।

सोनल वर्मा

साक्षात्कार - 1

नाम : बलदेव गंझू
उम्र : लगभग 50 वर्ष
स्थान : बेंती मौजा, हड़गड़ी टोला
भेंटकर्ता : एलेक्ज़ैण्डर टिग्गा

बलदेव गंझू एक 50 वर्षीय तजुर्बेकार व समझदार पुरुष है। यह विवाहित हैं और इनके छः बच्चे हैं, दो लड़के तथा चार लड़कियाँ। एक लड़की को छोड़ कर सभी बच्चों की शादी हो चुकी है और यह दादा भी बन चुके हैं। बलदेव इत्यादि चार भाई थे किंतु एक की मृत्यु हो चुकी है । इनके माता पिता का भी स्वर्गवास हो चुका है। यह सी सी एल में नौकरी करते हैं। पहले यह खेती बाड़ी करते थे ओर सेंद्रा (पारंपरिक शिकार) तथा अखाड़े मे नाचने गाने का बहुत शौक था। खेती के मौसम में यह खेती करते थे और बाकी समय ठेकेदारी पर मज़दूरी करते थे। फिर सीसीएल ने इनकी ज़मीन कोयला खदानों के लिए अधिग्रहण कर ली जिससे इन्हें अत्यंत कष्ट हुआ। इनका कहना है कि जिस दिन यह अपनी ज़मीन के कागज़ात इत्यादि जमा कराने सीसीएल के कार्यालय गए उस दिन इनकी आँखों से आँसू बहने लगे क्योंकि इन्हें बड़ा गहरा धक्का लगा था। इन्हें लगा कि मुआवज़े के मामले में इनके साथ अन्याय हुआ है किंतु यह कहते हैं कि किसी ने इनका साथ नहीं दिया क्योंकि सभी सीसीएल से नौकरी की उम्मीद लगाए बैठे थे। इनका एक लड़का खेती करता है और एक सीसीएल में नौकरी करता है। पर इन्हें यह नहीं मालूम कि इनके पोते को आगे नौकरी मिलेगी कि नहीं इसलिए इन्हें भविष्य की बहुत चिंता है।

हम लोग यहाँ हमारे दादा के समय से बसे हुए हैं। उन्होंने ही सारी जंगल झाड़ी साफ की और ज़मीन को खेती करने लायक बनाया। सर्वे के बाद से ये टेनेन्सी लैण्ड हो गया और अभी तक उन्हीं के नाम पर है। पहले यहाँ सभी खेती करते थे- मक्की, अरहर, उड़द, धान, महुआ, गोंदली, सब उगाते थे, कोई फसल नहीं छोड़ते थे। फिर भी पूरा नहीं पड़ता था। आषाढ़ सावन भादों में तो भूखे मरते थे। अगर अकाल पड़ता तो लोग गेठी - ठेना ला कर खाते थे। जेठ बैसाख में तरबूज खाते थे। फिर छिलका सुखा कर वो भी खा जाते थे। बस कैसे भी जी रहे थे। वैसे नहीं होता था तो कपड़े खरीदने के लिए भी फसल बेचनी पड़ती थी। बच्चों की शादी करनी हो तो उधार करना पड़ता था या गाय बकरी बेचनी पड़ती थी।

हमारे माँ बाप अनपढ़ थे और हमें भी अनपढ़ ही रखा। थोडे बड़े हुए तो हमें गायें चराने भेजने लगे। अगर कहीं भाग जाते तो मार पड़ती। कभी जोतने में गलती हो जाती तो मार पड़ती। ठीक ही था। पिटते नहीं तो सीखते कैसे? धीरे धीरे आ गया खेती करना। 15-16 वर्ष की उम्र में शादी हो गई। तब भी गाय भैंस की देखभाल ही किया करते थे। थोड़े बड़े और हो गये तो खेती के समय खेती और बाकी समय बाहर का काम पकड़ने लगे, जैसे राज मज़दूर का काम। फिर बड़े लोगों के साथ खदान जाना भी शुरू कर दिया और काम सीखने लगे। कोयले की हॉलिंग करते थे। लेकिन किसी ने कभी भी कुछ भी कहा, हमने खेती का काम कभी नहीं छोड़ा। और हमारी फसल हमेशा अच्छी आई।

तब और अब की खेती में अंतर

देखिए उस समय भी और अब भी, खेती करने में बहुत मेहनत चाहिए। खेती में सब चीज सही समय पर करनी होती है। पहले पानी की कमी थी। अब फसल ज्यादा अच्छी होती है। पहले गरीब लोग खाद नहीं डाल सकते थे। अब सबके पास पैसा है तो खाद डालते हैं और फसल अच्छी आती है, विशेषतः धान की फसल। पर पहले गोबर डालते थे तो फसल स्वादिष्ट ज्यादा होती थी। बहुत लोग मानते हैं कि अब के स्वाद में बहुत भारी अंतर आ गया है। यूरिया डालने से कई तरह का प्रभाव पड़ता है। सरकार ने अब एक मंहगा

बीज निकाला है - पहले जहाँ हम 80 किलो उगाते थे वहीं अब दोगुना नहीं तो तिगुना उगा लेते हैं। अब यूरिया सेहत पर चाहे अच्छा प्रभाव डाले या बुरा, लोग खा तो रहे हैं ना ? हम कहेंगे कि यह बुरा है तो हमको ही पागल कहेंगे। लोग दोगुना लाभ के लिए डालते हैं। हम भी लाभ देखते हैं। अब पुराने जैसा समय ढूँढने लगेंगे तो कहाँ मिलेगा?

पानी की स्थिति

यहाँ गाँव में तालाब थे और नदी, झरने से हम पीने का पानी लेते थे। पर यहाँ पहले भी अच्छा कुआँ नहीं था और अब भी नहीं है। एक आदमी ने खोदा भी, पानी बस आना ही शुरू हुआ था कि उसके घर में कोई मर गया। सब कहने लगे कुआँ उसके लिए ठीक नहीं है तो उसने वापस भर दिया। बस तब से ऐसा ही है।

वैसे भी, यहाँ पानी बहुत गहराई पर है। यह जगह थोड़ा ऊँचाई पर होने से इस झरने में पानी है। हमें यहीं से पीने का पानी मिलता है। झरने में खूब पानी है। चार हॉर्सपॉवर के पम्प से पानी निकालते हैं। पर जबसे खदान यहाँ आई है बड़ी परेशानी है। हम खदान की ओर से आया पानी पीते हैं। पहले जो नदी थी वह गंदी हो गई तो वहाँ नहाएँगे कैसे ? अब दामोदर नदी पर नहाने जाते हैं जो एक घंटा आना जाना होता है।

पहले यहाँ बहुत जंगल था

पहले जंगल से बहुत फ़ायदा था। जलावन के लिए लकड़ी थी। घर बनाने के लिए भी जंगल से लकड़ी ले आते थे। अब तो मरम्मत के लिए भी सोचना पड़ता है। लकड़ी खरीदनी पड़ती है। पहले पियार धठौड़ी जैसे जंगली फल मिल जाते थे। गेठी ठेना खाने को मिल जाता था। बहुत स्वादिष्ट लगता था। पहले जंगल की देखभाल के लिए गार्ड लगती थी। इसलिए ज़्यादा लकड़ी कट नहीं पाती थी। फिर यहाँ के लोग कोयला भी जलाते हैं इसलिए भी यहाँ थोड़ा जंगल अभी बचा है नहीं तो जलावन में खत्म हो जाता।

पहले जंगल की तरफ से बहुत शुद्ध हवा आती थी। साफ़ हवा और पेड़ों के कारण बाारिश भी अच्छी होती थी। अब तो बारिश ही नहीं होती। बुआई तैयार कर के बैठे रहते

हैं और बारिश नहीं होती। खेती अच्छी कैसे होगी ? अब तो हर जगह बस कोयले की धूल उड़ती है। खदानों ने जंगल तो खत्म कर ही दिया है, अब टाँड भी खत्म कर देंगे। सरकार तो बस नक्शे देखेगी और कोयले के लिए जमीन खोदेगी। हमें थोड़े ही कोई फायदा होगा। क्या करें ? जंगल को कैसे बचाएँ ? कह नहीं सकते। किसी न किसी तरह से सरकार से वापस लेना होगा।

विवाह के रीति रिवाज

अगर किसी की शादी की बात होती तो सारा गाँव मिल बैठ कर फैसला करता था। सब साथ ही होता था। अगर लड़के का बाप लड़की देखने आता तो सारे गाँव में खबर कर देते थे। सब बड़े बूढ़े, दूसरे गंझुओं के गांव के लोग भी शामिल होने आ जाते थे। उसी दिन धोबी दाना टूटता था और उसी दिन से लड़की उनकी हो जाती । अगर शादी से पहले माँ बाप के घर में लड़की मर भी जाएगी तो उसका क्रिया कर्म लड़के के हाथ से ही होगा। सब ठीक रहा तो फागुन के महीने में जिस दिन तारीख पक्की हुई, उस दिन लड़का बारात लेकर आएगा, मड़वा बंधेगा और बारात को खिला पिला के अगली सुबह लड़की विदा हो जाएगी। सब साज भार माता पिता देंगे। पहले जो चलता था वही अब भी चलता है।

पहले 12 पसेरी बढ़िया मिठाई देते थे अब घटा कर 2 ही कर दिया है। फिर माँ और दादी को मयौड़ी कर के कपड़ा भी देते हैं। बस। हमारी जाति में लड़की विदा करा के ले जाते हैं और वहाँ लड़के के माँ-बाप शादी करवाते हैं। मड़वे के नीचे वर-वधू बैठते हैं। सारे गाँव के लोग होते हैं। एक पंड़ित और एक ठाकुर शादी करवाते हैं। पंडित मंत्र पढ़ता है और ठाकुर बाद में सिन्हाई करता है । फिर अंत में लड़का लड़की की मांग में सिंदूर डालता है और शादी हो जाती है। ठाकुर ब्राह्मण मिल कर करीब 200 रु और खाना कपड़ा लेते हैं। माँ-बाप अपनी बेटी को जो बन सकता है देते हैं। बरतन, वगैरह। गरीब आदमी 100 रु देता है तो अमीर लोग हजारों रुपए देते हैं। अभी हमारी जाति में तिलक भी चलने लगा है। पर अभी हमारी नजर में ऐसा नहीं आया है कि लड़के वाले कहते हैं कि इतना

सारा गाँव एकता के सूत्र में बंधा हुआ था।

मालमोहुरा में हम 3 जाति के लोग थे। उराँव, गंझू और टाना भगत। 5 घर उराँव, 5 घर गंझू और 2 घर टाना भगत - यह सब माल मोहुरा के मूल निवासी थे और बहुत पुराने समय से वहाँ बसे हुए थे। सारा गाँव एकता के सूत्र में बंधा हुआ था। हम एक दूसरे से मिल जुल कर रहते थे और सब काम एक साथ करते थे। पर्व त्योहार में मिल जुल कर खान पान होता था। किसी पर कोई दुख मुसीबत पड़ने से आस पास के सब व्यक्ति इकट्ठा हो कर पीड़ित परिवार को सहारा देते और रुपया पैसा या अनाज से भी मदद करते। गाँव में सभी पर्व त्योहार हम मिल जुल कर धूमधाम से मनाते थे, चाहे वो क्रिसमस या जन्म पर्व हो या करमा पूजा या सरहुल त्योहार या होली दीपावली। सभी लोग एक दूसरे के साथ नाचते गाते, खाते पीते थे। हमारे पुराने मालमोहुरा में हालांकि 3 समुदाय रहते थे लेकिन रहन सहन, खान पान से यही मालूम होता था कि सभी एक ही जाति, एक ही समुदाय के हैं।

अंजलुस बेक - 46 वर्ष - कल्याणपुर

दो नहीं तो शादी नहीं करेंगे। अभी तो हमारी जाति में परंपरा के अनुसार ही देते हैं।

पर्व त्योहार और उत्सव

पहले तो हम लोग का करमा त्योहार है। सब मिल कर नाच गाना करते हैं, खाते पीते हैं, पर पहले जैसे लोग जमा होते थे अब नहीं होते। हम लोग करमा की डाली गाड़ते हैं, घर पर भी रखते हैं। लड़का लोग अपना बाजा ले कर अखाड़े में खेल नाच करते हैं। कुआँरी लड़कियाँ पकवान ले कर करमा को नियम से चढ़ाती हैं। करीब आठ दिन पहले से एक टोकरी मे पाँच तरह का अनाज उगाती हैं। इसको जावा कहते हैं। फिर करमा के समय उसको चढ़ाती हैं। फिर डलिया सहित नदी में बहा देती हैं।

हम सरहुल भी मनाते हैं। उस दिन उपवास करते हैं। फिर सुबह पूजापाठ होता है। सरहुल मंडल में पूरी बस्ती जुटती है। पहान (पुजारी) पूजा के लिए एक मुर्गा काटता है और खा पी लेता है। फिर चार पाँच बजे फूल खोंसना शुरू कर देते हैं। वह सखुआ के फूल सूप में रख कर, घर घर जा कर देता है। लोग इन्हें अपने देवता के स्थान पर या जहाँ चाहते हैं, वहाँ रखते हैं। नाचने खेलने वालों को घर वाले महुआ दारू एक आधा पाव देते हैं। पहान को भी देते हैं। यही सरहुल का नियम होता है। सरहुल होने के बाद ही गाँव में कोई काम शुरू होता है। जैसे सरहुल के बाद ही धान बोया जाता है। सरहुल के बाद करमा का त्योहार आता है।

करमा बहाने के 13 दिन के भीतर जीतिया त्योहार मनाया जाता है। सब जगह एक जैसा नहीं मनाते। कोई लोग बहुत मानते हैं, कोई लोग कम। हम लोग उस दिन उपवास नहीं करते पर बहुत जगह होता है। इसमें मुख्य देवता को माड़ नहीं गिराया जाता है। इसमें अगर कोई मुआ मरतबी (भटकती आत्मा) है, उसके लिए किसी स्थान को लीप-पोत कर उसकी वहाँ स्थापना कर देते हैं। और उसी में उसका पूजा पाठ करते हैं। लड़के लोग बाजा गाजा ले कर रात भर अखाड़े में नाचते हैं। सुबह हम लोग नहा धो कर तीन चार प्रकार की सब्जी बनाते हैं, पुराने चावल का भात बनाते हैं और इसी को देवता को चढ़ाते हैं। मुआ मरतबी के नाम से भी चढ़ाते हैं। ऐसे ही जीतिया गुजर जाता है।

सीसीएल के आने से क्या हुआ

पहले हम प्राईवेट में खट रहे थे। फिर वही से हमें सीसीएल में नौकरी मिल गई। सब प्राईवेट ठेकेदारों को हटा दिया। बिहार सरकार ने बहुत पुलिस लगाई और सब ठेकेदारों को भगा दिया। सब का सामान तक जहाँ का तहाँ रह गया। प्राईवेट को सरकारी कर दिया।

हमारा सारा गाँव सीसीएल ने 1980 में अधिग्रहण कर लिया। ज़मीन नापा और 1990 तक सबको मुआवज़ा का पेमेंट कर दिया। नौकरी किस्त किस्त करके दी, पहले 50 आदमी, फिर 30 आदमी, ऐसे ज़मीन के हिसाब से सबको नौकरी दिया। अधिग्रहण से पहले

नोटिस भी ज़रूर दिया होगा। हमें पता नहीं। सहदेव मुखिया को दिया हो। पर नोटिस के बाद से तो हल्ला हो गया कि सीसीएल बहाली कर रहा है जिस दिन हमने अपनी जमीन सीसीएल को सौंपी उस दिन हमारी आँख में आँसू आ गए। यह तो बहुत दुर्घटना हो गया कि एक लड़के की नौकरी लगी। 30-35 साल नौकरी करेगा, फिर? उसके बाल बच्चे क्या करेंगे ? बहुत लोगों को बहुत अफसोस हुआ।

यह तो नहीं कह सकते कि यहाँ हड़गड़ी में कितने लोगों को नौकरी मिला। हर 3 एकड़ पर एक नौकरी दिया। तो जिनके पास ज़्यादा ज़मीन थी उनको ज़्यादा नौकरी मिली जिनके पास कम थी उनको कम। कई लोग जिनके पास कम ज़मीन थी, जैसे किसी के पास 1 एकड़ किसी पास 15 डीमी या 10 डीमी उन लोगों ने मिल कर 3 एकड़ पूरी करी। अगर लड़ाई कर के कहा तो ऐसे लोगों को भी नौकरी मिला। मगर इधर हड़गड़ी में बहुत ज़मीन डूब गई। खोजने वाला कोई नहीं है। सब छोड़ छाड़ दिये दौड़ धूप कर के क्योंकि वहाँ जाने से कोई मदद नहीं करता है।

जब शुरू में सीसीएल आया तो हमको सूचना किया। फिर वहाँ से बुलावा हुआ। हम तीनों भाई गए। हमसे हमारे बाप पुरखों के नाम पूछे और हमारे नाम लिखे। फिर हमारी ज़मीन का खाता ले कर आने के लिए कहा। हम खाता ले कर जाते थे और वहाँ मिलाते थे। फिर ऐसे लिखा पढ़ी के बाद ज़मीन के पैसे वाला पेमेंट नोटिस आ गया। पर हम लोगों को बहुत कम पैसा मिला ज़मीन का। अपनी मर्ज़ी से किसी को तीन नम्बर ज़मीन बना दिया, किसी को दो नम्बर। किसी को छः हजार रुपए एकड़ दिया, किसी को सात हजार तो किसी को पाँच हजार। सुनते है कि बहेरा के मियाँ लोगों को पचास हजार रुपए एकड़ मुआवज़ा मिला है लेकिन इधर की तरफ तो वही छः-सात हजार ही है।

अब हम भी सीसीएल को अकेले आदमी क्या बोलेंगे ? हम बोले तो सहदेव मुखिया जैसे प्रमुख लोग हमें बेवकूफ कहेंगे। कहेंगे कि सीसीएल के पीछे सरकार है। पैसा नहीं लोगे, नौकरी नहीं लोगे तो सरकार ज़मीन हड़प लेगी। फिर कहाँ खोजने जाओगे ? जो मिल रहा

है ले लो। इसी बात से बहुत लोग मुड़ गए। उसी समय बोल कर एग्रीमेंट करा लेना चाहिए था। कि हम खानदानी सर्वे ज़मीन दे रहे हैं जिससे हम पीढ़ियों से कमा कर जी रहे हैं। हमें नौकरी चाहिए, अभी हमारे बेटे के लिए दे रहे हैं, अगर मर जाएगा तो उसके बेटे के लिए भी होनी चाहिए। एग्रीमेंट करते हैं तो जमीन में खदान खोलिए, वरना नहीं। पर उस समय सब नौकरी के लिए भूखे थे, कोई नहीं बोला।

जो हमको पैसा मिला था वह भी खत्म हो गया। न पैसा है न ज़मीन। अब किसी की हस्ती नहीं है कि कुछ भी बोले। अब सब खत्म हो गया है। बस जब तक जी रहे हैं, फिर कौन सा देखने आएँगे कि बाल बच्चे खा पी रहे हैं कि नहीं। कोई मदद भी नहीं करता। 1990 में 8000 रु का चेक जमा किया जो मुआवजे का मिला था। फिर पास बुक न० में कुछ गड़बड़ी हो गई। खाता में पैसा नहीं दिखाता। बैंक मैनेजर मदद नहीं करता, कहता है कि एकदम नहीं देंगे। हम कहते हैं हमारे पास सब कागज मौजूद हैं। मेरा लड़का दरभंगा हाऊस से लिस्ट निकलवाया जिसमें परमिट के नम्बर हैं पर जी.एम भी मदद नहीं करता। अब कोर्ट कचहरी में कितना पैसा लगाएँगे ? हमारा पैसा तो बैंक में ही फंसा रह गया। अब क्या करें?

सीसीएल के आने से बहुत परिवर्तन है। जिनके पास नौकरी है वो खुश हैं, जिनके पास नहीं है वो दुखी हैं। पर ज़मीन के जाने से सब कोई दुखी हैं। नौकरी तो खत्म हो जाएगी। जिनके पास ज़मीन है वह फिर भी जोत कर खा लेंगे। बाकी लोग ? गाँव वालों को यह सब मीटिंग बुला कर कुछ निर्णय करना चाहिए।

साक्षात्कार -2

नाम : भजु गंझू
आयु : 80 वर्ष
स्थान : बेंती, हड़गड़ी टोला
भेंटकर्ता : धनेश्वर गंझू

भजु गंझू 80 वर्षीय पुरुष हैं और पशु पालन का कार्य करते हैं। इनकी 3 एकड़ जमीन सीसीएल में गई है जिससे यह दुखी तो हैं किंतु जीवन के प्रति निराश नहीं हैं। इनके कोई पुत्र नहीं है। इसलिए इन्होंने ज़मीन के बदले मिली नौकरी अपनी बड़ी बेटी को दिलवाई है। इनकी 2 ही बेटियाँ हैं। और दोनों विवाहित हैं। यह अपनी पत्नी सहित अपनी बड़ी बेटी और दामाद के साथ रहते हैं। जब इन्होंने बड़ी बेटी के नाम सब कुछ किया तो पंचायत के सामने उससे व दामाद से करार करवाया कि वह आजीवन इनकी व इनकी पत्नी की देख-भाल करेंगे। इनका कहना है कि बेटी इनकी अच्छे से देखभाल करती है और यदि दामाद से कभी कोई परेशानी होती भी है तो उसे समझाने की कोशिश करती है। फिर भी यह ज़मीन के चले जाने से भविष्य के प्रति चिंतित हैं।

हमारे पूर्वज शुरू से हड़गड़ी में बसे हुए हैं। हम आदिवासी हैं। उस पुराने समय में जंगल बहुत अच्छा था लेकिन हमारे सामने ही सामने खत्म हो गया । पहले जैसे न वर्षा पानी होता है न पैदावार। पहले थोड़ा बोने पर भी खूब उपज होती थी और सभी आदमी घर का अनाज खाते थे। पर अब नहीं होती। लोग उतनी मेहनत भी नहीं करना चाहते और जंगल-झाड़ कटने से वर्षा भी कम हो गई है। फिर सारी उपजाऊ

जमीन तो खदानों में चली गई।

खदान शुरू होनेे से पहले हम सब तरह की खेती करते थे। सारे साल अपना अनाज खाते थे, जो बचता था बेच देते थे। अब तो सीसीएल ने ज़मीन को बर्बाद कर दिया है। अब गाँव वालों को दूसरा साधन ढूँढना पड़ रहा है ज़ीविका चलाने का। जिनके पास ज़मीन थी उन्हें तो नौकरी मिल गई, जिनके पास ज़मीन नहीं थी उन्हें कुछ नहीं मिला और वो और भी गरीब हो गए। फिर जिन लोगों को नगदी रोज़गार मिलता है, वो खेत में क्यों मेहनत करेंगे ? अब तो खेती बची ही नहीं।

पानी की स्थिति

हमारे गाँव में शुरू से ही कुएँ नहीं हैं। हम नदी से पानी लाते हैं और हमारे खेतों की बड़े अच्छे से सिंचाई होती थी। कुदरत ने हमको चारों तरफ नदी नाले झरने दिए थे। अभी समझ नहीं आता कि भगवान ने जो इतना सुन्दर सुन्दर प्राकृतिक व्यवस्था किया था वे सब कहाँ लुप्त हो गया और हम लोग को अब कहाँ मिलेगा ?

बेंती गाँव और हड़गड़ी टोला नहाने धोने पीने का पानी जोभिया झरना से लेते है। यहाँ प्रेशर पंप सेट है और सारा साल पानी रहता है। यह गाँव से 2 किलोमीटर दूर है। वैसे तो कोई मुश्किल नहीं है पर जैसे रात को एकदम पानी की ज़रूरत पड़ गई तो दूर जाने मे मुश्किल होती है। या तो दिन में व्यवस्था रखो नहीं तो रात में बहु बेटियों को जाने में तकलीफ होती है। उन दिनों हमारे गाँव में कुआँ तालाब तो नहीं थे पर नदी में झरने नाले बहुत थे, उन्हीं से खेतों में सिंचाई करते थे। लेकिन सीसीएल नदी नाला कोड़ कर धारा का निकासी दूसरी ओर कर दी। सारा पानी का सिस्टम विनाश हो गया। जंगल चरगाह सब बर्बाद हो गया। खदान में ब्लास्टिंग से नदी तालाब का स्रोत और गहरा चला गया । अब तो नहाने धोने शौचालय में बहुत असुविधा हो रही है। धुआँ और गैस से सारा पर्यावरण प्रदूषित हो गया है।

जंगल से जीविका चलती थी।

पहले हम जहाँ देखते थे वहाँ जंगल ही जंगल हरा भरा नजर आता था। अब पता नहीं कहाँ लुप्त हो गया है। पहले हम जंगल से बहुत कुछ चीजें जाते थे। पत्ता, दातुन, बाँस, साबाई घास, खजूर पत्ता, इत्यादि। मकान बनाने के लिए भी लकड़ी वहीं से लाते थे। खाने पीने की भी बहुत चीज मिलती थी- जैसे गेठी ठेना, भोल कंद, फीर कंद, पियार अनार, सब चीज लाते थे। अब तो फलदार पेड़ों की अंधाधुंध कटाई और खदान द्वारा जंगलों को उजाड़ने से हमारा सब कुछ नष्ट हो गया है, फिर यह सब सामग्री की क्या आशा करेंगे ? अब तो काठी झुरी सिर्फ छोटा छोटा काँटा का झाड़ी मिलता है। सिर्फ नाम का जंगल है।

पहले जब जंगल था तब बहुत अच्छा लगता था। खाने पीने की चीज भी मिलती थी और बहुत काम की चीज भी मिलती थी, पत्ता दातुन, जलावन, घेरावन, मकान बनाने की लकड़ी, वगैरह। तो रुपए पैसे की बहुत बचत होती थी। फिर जंगली जड़ी बूटी, फल फूल बेच कर हम रोजगार भी कमाते थे। हम लोग साल का आधा दिन जंगल की सामग्री से गुजर बसर करते थे। घर मकान कृषि कार्य की सामग्री जंगल से ही मिलती थी और उसमें कोई खर्च नहीं पड़ता था। अब इसके विपरीत होता है- मकान बनाना हो तो लकड़ी खरीदो, फल खाना है तो खरीद कर खाओ, घेरावन का मजदूरी दो। खदानों ने सारा जंगल उजाड़ दिया है।

पुराने समय में हम जंगल में सेन्द्रा शिकार भी बहुत करते थे। सब लोग एक साथ मीटिंग करके शिकार का दिन तय करते थे। फिर सरना में जाकर देवता गाँवट की शिकारी पूजा करके शिकार की सफलता की कामना करते थे। फिर सब अपना जाल, तीर-धनुष, कुल्हाड़ी ले कर जंगल जाते थे और सूअर, कोटरा, खरगोश, हिरण, इत्यादि मार कर लाते थे। जो भी शिकार करते थे आपस में बराबर बाँट लेते थे। जंगल के अंदर बहुत सारी दवाइयाँ थीं और हम तरह तरह की जड़ी बूटी लाते थे। जैसे सिरदर्द के लिए माथधाँस या करम का छाल। गर्मी हुई है तो सिंदवार के पत्ते पीस कर पीते थे। खाँसी हो जाने से ढोठा का छाल खाने या चबाने से तुंरत आराम होता था। फिर अगर किसी के पेट में जोंक हुआ है तो गेठी खाते थे जिसे हम पुराने समय से ही खाने के समान खा कर गुजारा करते थे।

ओ बी डम्प आग की लहर के समान लगता है।

सारे घर में गैस फैल जाती है। कितनी बीमारी फैलती है। यहाँ बाल-बच्चों की मृत्यु भी हो चुकी है। कोयले की गैस ही ज़िम्मेदार है। गैस उठती है तो पूरा नशा हो जाता है। उस समय एकदम बेहोश होने लगते हैं। उस तरफ कोई भी काम हो हम उधर नहीं जाते। दिन भर के लिए नदी किनारे चले जाते हैं। शाम को जब थोड़ा ठण्डा होता है तब वापस आते हैं। इसी के कारण सारे पेड़ पौधे जल कर खत्म हो रहे हैं। गैस हमको भी खत्म कर देगी।

फूलमनी सोरेन - 30 वर्ष - गंधौनिया

अब तो वह लुप्त हो गई है और दवा के नाम पर भी नहीं मिलती।

अगर कोयला खदान नहीं आया होता तो कुछ जंगल होता और जड़ी बूटी भी जरूर मिलती। फिर हम वैद्य डॉक्टर की लूट से बच जाते। जड़ी बूटी खाने वाला ज्यादा स्वास्थ्य और आयु पाता है। पहले तो किसी भी बीमारी में हम बिना डॉक्टर से पूछे जंगल से जड़ी बूटी लाते और बीमार आदमी को पीस कर खिलाने से वह ठीक हो जाता था। लेकिन अब तो बिना डॉक्टर या अंग्रेजी सुई दवा के कोई ठीक ही नहीं होता है, फिर भी बहुत मर जाते हैं। पहले जंगली बूटी खाने से ठीक हो जाते थे,अधिक आयु तक जीवित रहते थे और इसमें कोई रुपया पैसा भी खर्च नहीं करना पड़ता था। अब यह सब कुछ भी नहीं बचा, यही सब कुछ सोच कर हमें बहुत अधिक अफसोस होता है।

हम आदिवासी दहेज नहीं लेते

हमारे यहाँ शादी परम्परागत ढंग से होती है। गाँववाले या रिश्तेदारों के माध्यम से प्रस्ताव आता है या भेजा जाता है। अगर स्वीकार है तो बातचीत आरंभ हो जाती है। हमारा समाज आदिवासी समाज है, हम लोग के यहाँ कोई तिलक दहेज का माँग नहीं होता। जिस

घर में शादी होती है, वहाँ के लोगों की एक दिन सलाही बैठक होती है। उस दिन न्योता बुलाहट का प्रस्ताव रखते हैं और उसी दिन शादी की तारीख निश्चित करते हैं। गाँव वालों को खाना पीना खिलाया जाता है और शादी में काम करने वाले मेन कार्यकर्ता का चुनाव किया जाता है। सब लोग मिल जुल कर गाँव में विवाह में मदद करते हैं। अगर किसी को राजी खुशी से हमारी बेटी को कुछ देना है तो देगा, या किसी को हमारी रुपए पैसे से मदद करनी है तो करेगा।

एक सप्ताह पहले जो सलाही बैठक होती है उसमें सब निर्णय लिया जाता है। 2-2 व्यक्तियों का चयन किया जाता है जो शादी का सब काम और प्रबंध संभालते हैं। गाँव वाले एक दूसरे की मदद न करें तो किसी गरीब का काम कैसे होगा ? मदद से ही दुखियों का बेड़ा पार होता है, बड़ा कार्य भी आसानी से हो जाता है। हम लोग शादी-विवाह में आँगन में मड़वा गाड़ते हैं। लड़का लड़की मड़वा में बैठते हैं। सब नियम होता है फिर मड़वा पूजा होता है। इस पूजा में बकरे की बलि चढ़ाई जाती है। गाँव का पहान और भगत इस पूजा को करते हैं और इसमें, जिसके घर में शादी है उसके पुरखों की, देवता पितर की पूजा की जाती है। हम लोग पुराने समय में शादी में पंडित ठाकुर को नहीं बुलाते थे। खुद से सारे रीति रस्म करते थे। यही हमारा सामाजिक तौर तरीका था। लेकिन अब हम देखते हैं कि आदिवासियों के दिमाग में भी पंडित लोग अपना पंडितवादी विचार-धारा भर देते हैं और इसके चलते हमको जजमान कह कर भक्ति पूजा की तरफ खींचते हैं। हमें मजबूर हो कर शादी विवाह में पंडित ठाकुर को बुलाना पड़ता है।

शादी में बाजा गाजा बहुत ज़रूरी था, खास कर के चमारी बाजा, ढाक, नगाड़ा और शहनाई बहुत महत्वपूर्ण थे। कितनी भी दूर शादी हो, बाजा बजाने वाला चलने से कभी इंकार नहीं करता था। और यह सब संगीत बहुत कम पैसे में प्राप्त हो जाता था। लेकिन तब और अब में बहुत अंतर है। अभी तो लाउडस्पीकर और बैंजो, नए नए बाजे चलते हैं। मड़वा की जगह टैंट शामियाना चलता है। पहले किसी प्रकार का मांग नहीं था। दान दहेज रीति रिवाज के अनुसार चलता था। शादी आँगन में होती थी, किसी मंदिर या देवस्थान में नहीं,

जैसे कि अब करने लगे हैं। अब तो तिलक दहेज का माँग करने लगे हैं। फैशन कपड़ा मुँहमाँगा देना पड़ता है। अनेक प्रकार का खरचीला शादी अब होने लगा है।

इस बदलाव के कारण एक दिन हमारा गंझु भोग्ता समाज बहुत खतरनाक खाड़ी में जा गिरेगा। इतना खर्च, इतना फैशन एक सामाजिक कुकर्म हैं। पुराने समय में बहुत कम खर्च में शादी आराम से हो जाती थी। पुराने समय में गरीब दुखिया आदमी भी दाल चावल की बदौलत साधारण खानपान खिला कर भी शादी कर देता था। आज गरीब आदमी क्या करेगा ? शादी होने के बाद हम लड़का लड़की को गांव में घुमाते हैं और टोला मोहल्ले वाले सब लोग देखते हैं। अपनी अपनी खुशी से दान-तोहफा भी देते हैं। ये तिलक प्रथा वगैरह आदिवासी समाज में शुरू से ही नहीं था और अब भी नहीं है। न ही हम इसको चलने देंगे। लेकिन अब समाज बदल गया है। खानपान, रहन सहन, पहनाव ओढ़ाव, सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव आया है जो कि उचित नहीं है।

लगता है कि सीसीएल ने हमको लूट लिया

हमारी 6 एकड़ ज़मीन सीसीएल ने अधिग्रहण की है जिसके बदले हमें 2 नौकरी दी। एक हमारी बेटी को और एक हमारे भतीजे को। मुआवज़ा हमको 26000 रु दिया जो हमने 13000-13000 कर के आधा आधा बाँट लिया। हमारी जमीन पर महुआ, आम, कटहल के फलदार वृक्ष थे जो बर्बाद हो गए और हमको 20-25 रुपये प्रति पेड़ मुआवज़ा दिया जो कि पेड़ तो क्या पत्तों की भी कीमत नहीं है। सीसीएल ने हमें ज़मीन के लिए मुआवज़ा नहीं दिया है बल्कि बच्चों को बहलाने फुसलाने के लिए चॉकलेट जैसा दे कर हमें लूट लिया है। फूटी कौड़ी के भाव मुआवज़ा दिया हैं। 4000 रु प्रति एकड़- क्या यह सही है ? अभी का मुआवज़ा बहुत अच्छा दे रहे हैं, बहेरा, कल्याणपुर की तरफ जमीन का मुआवजा 80 हजार से एक लाख रु प्रति एकड़ है। मगर शुरू में हम मंगरदाहा बेंती तरफ वालों को तो कम्पनी ने ठग लिया है। जब सब ज़मीन के नीचे एक जैसा कोयले का भण्डार है तो फिर कहीं मुआवज़ा 4000 रु, कहीं 80000 रु, यह कैसा नियम है सीसीएल का?

हम अनपढ़ लोग हैं। जानकारी के अभाव में कुछ नहीं बोल सके इसलिए ठगे गए। सीसीएल ने खदान का कार्य शुरू कर दिया। ज़मीन के मालिकों की अनुमति के बगैर मुआवज़ा बन कर आया और सहदेव मुखिया पर विश्वास कर के हम सब बिना सोचे समझे वह मुआवज़ा ले लिए। लेकिन जब गाँव वालों को बरगलाने और सीसीएल की बिचौलियागिरी करने के कारण सारा गाँव उसके विरोध में हो गया तो वह यहाँ से भाग गया। सारा ज़मीन, नौकरी, मुआवज़ा, सब सीसीएल से अच्छी प्रकार ले कर राय बस्ती में अपना जगह ज़मीन खरीद कर घर मकान बना कर अच्छे से रहता है।

इधर हम लोग 13000 में ही अपनी ज़मीन से हाथ धो बैठे हैं। अगर हमको कल सीसीएल यहाँ से उठा देगी तो हम क्या करेंगे ? लेकिन हम सभी गाँववाले तभी यहाँ से उठेंगे अगर हमको सीसीएल मनपसंद जगह और सारी सुविधाऐं देगी। नहीं तो नहीं जाएँगे। जैसी ज़मीन हमने तेरह हजार में दे दी वैसी तो अब तेरह लाख भी देंगे तो भी नहीं मिलेगी। लेकिन अब क्या कहें ? साँप निकलने के बाद लकीर पीटने से क्या फायदा ?

साक्षात्कार - 3

नाम : बिगन गंझू
आयु : 62 वर्ष
स्थान : फुंसीटोंगरी (बेंती)
भेंटकर्ता : शंकर गंझू

बिगन गंझु पिछली 2 पीढ़ी से मालमोहुरा में रह रहे थे। किंतु सीसीएल द्वारा भूमि अधिग्रहण करने के कारण इन्हें वहाँ से विस्थापित हो कर फुंसीटोंगरी में आना पड़ा। यह विवाहित हैं और इनके चार बच्चे है - 2 लड़के और 2 लड़कियाँ। दोनों लड़कियों का विवाह हो चुका है। एक लड़के को सीसीएल में नौकरी मिली है और एक लड़का बेंती में पढ़ रहा है। यह खुद भी पढ़ना चाहते थे और स्कूल न होने के बावजूद इन्होंने एक प्राइवेट मास्टर से पढ़ना लिखना सीखा। मालमोहुरा को छोड़ कर यहाँ फुंसीटोंगरी में विस्थापित हो जाने से इन्हें बेहद दुख और कष्ट है और इस बात के लिए यह जिम्मेदार मानते हैं सीसीएल को और गाँववालों की आपसी फूट को।

पहले बहुत खुशहाली थी। कोई आपस में लड़ाई नहीं करता था। सब खेती-बारी करते थे और उसी से साल भर का अनाज हो जाता था। गोबर के खाद से ही सारी उपज होती थी, आज की तरह सल्फेट नहीं खरीदना पड़ता था। जिसके पास हल बैल या बीज नहीं रहते थे तो हम सब गाँव वाले उसकी मदद कर देते थे। सभी व्यक्ति मदद के लिए तैयार रहते थे और एक दूसरे से माँग कर भी अपना काम निकाल लेते थे। सारी सब्जी वगैरह घर पर ही उगाते थे। जब खेती का काम खत्म हो जाता तो मज़दूरी करते और उन पैसों से नमक और मिट्टी का तेल खरीदते थे। उन दिनों 6 आना किलो चावल था और 5 ढेला

गुड़ 1 रुपये में आ जाता था। हमने चावल 60 रु क्विंटल और मूँगफली का तेल 15 रु टिन भी लिया है।

पहले यहाँ घर के आस पास तक जंगल था। अब तो सीसीएल ने सब उजाड़ दिया है। पहले हम सिर्फ घर बनाने के लिए जंगल से लकड़ी काटते थे। जंगल से बहुत लाभ था। जेठ और आषाढ़ में जंगल से गेठी ठेना लाते थे जो उबाल कर खाते थे। महुआ को भाड़ में भून कर और ढेकी में कूट कर खाते थे। रोज पत्तल में खाते थे। पत्तलों को हम सोने की थाली कहते थे। पहले कोई स्टील के बरतन नहीं होते थे। सरैय को जमा कर के उसके पंख जला कर फटकते थे, फिर बना कर खाते थे। उसमें सरगुजा मिला कर खाना बहुत अच्छा लगता था। जंगल से ये सब खाने पीने की सामग्री मिलने से अनाज़ की बहुत बचत हो जाती थी। उस समय शराब बनती थी पर छुपे रूप में बनती थी। आज की तरह नहीं।

पुराना समाज अब नहीं रहा

पहले इस तरह शराब न बनती थी न अधिक लोग पीते थे। अगर बनती थी तो पुलिस घर घर जा कर घड़ा बर्तन फोड़ देती थी। लड़के लोग भी इस तरह प्रत्यक्ष तौर से नहीं पीते थे। आज अगर बूढ़े बुजुर्ग कुछ सुझाव भी देते हैं तो उनको साफ बोल दिया जाता है कि बूढ़े लोग कुछ नहीं जानते। हम बुजुर्गो से कोई कुछ सीखने का प्रयास भी नहीं करता।

पहले तो अगर किसी लड़के लड़की में अपनी मर्ज़ी से प्रेम हो जाता था तो उसकी आदत छुड़ाने के लिए लड़के को महुआ के पेड़ से बाँध कर चारों तरफ सरगुजा की भूसी में आग लगा देते थे। फिर एक डंडा गर्म कर उसकी जाँघ दागी जाती थी ताकि दूसरे लड़के लड़कियाँ इस बात से सबक लें। और ऐसी गलती न करें। कोई दोबारा गलती करता तो उसको मृत्युदंड तक दिया जाता था। गलत निगाह और हँसी मजाक करना मना था। लड़का-लड़की सब को भाई चारे का रिश्ता मान कर चलना होता था। आजकल की समाज व्यवस्था एकदम गंदी हो गई है। यहाँ तक कि माँ बाप को भी इज़्ज़त नहीं दी जाती और

कुल खानदान को तो एकदम डुबो कर रख दिया है।

पहले इतना फैशन कपड़ा नहीं था। सिर्फ भगवा पहनते थे। महिला लोग इतना रंग बिरंगा नहीं पहनती थीं। सिर्फ मूँगिया साड़ी महनती थीं जो मात्र 5 रुपए में आती थी। अब इस नई जगह में तो पुराना समाज नहीं चलता बल्कि खराब ही चलता है। यहाँ तो ऐसा लगता है जैसे कुआँरी लड़की को शादी कर के नए घर में भेज दिया हो। पुरानी जगह पर हर चीज में चैन लगता था और यहाँ बेचैनी। जब वहाँ की याद आती है तो बहुत खराब लगता है।

अपना घर तोड़ा तो आँखों में आँसू आ गए

हम लोग यहाँ इसलिए आए क्योंकि सीसीएल ने हमें वहाँ से भगा दिया। जब उन्होंने सारी जमीन ही अधिग्रहण कर ली तो हमें दूसरी जगह जाना पड़ा। हमें गाड़ी में बिठा कर कल्याणपुर ले गए जहाँ पर मुसलमान हैं, चिरैयाटाँड भी ले गए। लेकिन हमने कहा हमें यह

टूटे घर...

सब जगह पसंद नहीं है। हम लोग को बेंती ठीक है, हम पूजापाठ भी वहीं करते हैं, हमें बेंती ही दो। वे बोले वहाँ जगह नहीं है। हमने कहा आपने मुसलमानों को भी तो वहाँ बसाया है। वैसे तो उनका समाज बहेरा में भी है, वे वहाँ भी तो रह सकते थे। पर उन लोगों को तो आपने बेंती में बसाया है, तो हमारे लिए जगह कैसे नहीं है ? जब हम लोग अपनी बात पर डटे रहे तो उन्हें हमें फुन्सी टोंगरी में ही बसाना पड़ा।

हमने उनसे कहा कि आप लोग पूरे मौजा को तो यहाँ से उठा नहीं रहे हैं कि हम अपने अपने देवी-देवताओं को उठा कर ले जाएँ ? न आप हमारे देवताओं के लिए कोई मण्डप दे रहे हैं। हमारी सारी सम्पत्ति यहीं है और सिर्फ एक टोला को आप अलग कर रहे हैं। ऐसे तो हम नहीं जाएँगे। अंत में सब ऑफीसर लोगों को हमारी बात माननी ही पड़ी।

हम लोगों को विस्थापित करने का कोई नोटिस नहीं दिया। हमने माँग भी करी तो कह दिया गया कि कोई नोटिस वोटिस नहीं दिया जाएगा। सरकार ने आदेश दिया है और हमको जाना ही होगा। उन दिनों हमारा मुखिया सहदेव सिंह था। उसने कितने लोगों को रुलाया है। वह अब इस क्षेत्र में नहीं रहता। जब हमें बिना नोटिस के भगाने लगे तो गहरा दुख हुआ और आँखों से आँसू आ गए। और जब घर द्वार तोड़ने के लिए कहा तब तो कदापि मन नहीं हुआ। लेकिन अंत में हैरान हो के घर तोड़ा और देवता के स्थान से सिर्फ मिट्टी उठा कर ले आए और दूसरी जगह में बिठाया।

जब मकान टूटा तब समाज में एकता नहीं थी

समाज दो भागों में बँट गया था- गंझु लोग और उराँव लोग अलग हो गए थे। इसी आपसी फूट को देख कर, जिन लोगों को नौकरी दी थी उन्हें मकान न तोड़ने का आरोप लगा कर घर पर बिठा दिया। अंत में मजबूर होकर सभी को तोड़ना पड़ा क्योंकि सीसीएल ने लिखित रूप में धमकी दी कि जब तक घर नहीं टूटेगा तब तक फिर से नौकरी पर आने का आदेश नहीं दिया जाएगा। आपसी फूट के कारण ही सबको घर तोड़ना पड़ा। यही कारण था कि हम लोग ज़्यादा दिन लड़ाई नहीं लड़ सके क्योंकि कोई भी आदमी किसी प्रकार का

भी आपस में सहयोग नहीं करता था। ज़्यादा जानकारी नहीं होने के कारण मुखिया हमें डराने में भी कामयाब हो गया। मंगरदाहा में गोवर्धन सिंह और बेंती में सहदेव सिंह ने लोगों को बर्बाद कर दिया। सहदेव सिंह हमसे कहता था कि सीसीएल के ऑफिस जा कर माँग करो नहीं तो नौकरी नहीं मिलेगी। ऑफिस में गए तो देखा कि नाजायज़ लोगों से गलत तरीके से नौकरी का फॉर्म भरवाया जा रहा है। मैंने कहा ऐसे काम नहीं चलेगा। नौकरी का फॉर्म भरने से पहले राजस्व विभाग से जमीन की सही जाँच करवानी पड़ेगी। छानबीन कागज़ात में हमारी ज़मीन 15 एकड़ 15 डी मी निकली। लेकिन मुखिया ने 18 एकड़ बता कर 6 आदमियों का नाम नौकरी के लिए दर्ज करवा दिया था। असल में 5 आदमियों को ही नौकरी मिलनी चाहिए थी। हम लोग की 1 एकड़ ज़मीन कम हो रही थी जिसकी व्यवस्था हड़गड़ी से कर के जब हम लोग पहुँचे तो देखा नौकरी के लिए 6 आदमी उपस्थित हैं और सहदेव सिंह उनकी दलाली कर रहा है। हमें उस पर बहुत गुस्सा आया और हम उसको डाँटने लगे। तब मुखिया हमें पुलिस की धमकी देने लगा। यह सब देख कर राजस्व पदाधिकारी हमारा ही पक्ष लिए और कहा कि 5 लोगों को ही नौकरी देंगे। असल में सबसे बड़ी गलती मेरे चचेरे भाइयों ने मुखिया का दलाल बन कर की। उन लोगों ने लड़ाई झगड़ा कर के मेरे छोटे भाई की ज़मीन में से नौकरी ली। आपसी फूट ने सब गड़बड़ कर दी।

हम लोग के बाल बच्चे कहाँ जाएँगे ?

यहाँ हमें सीसीएल ने सिर्फ 0.5 डी मी का प्लॉट दिया है और कहा कि इसी में ही आप घर बनाइए। हमने कहा कैसे होगा ? आप लोगों ने मुसलमानों को अधिक ज़मीन दी है और हमें कम, ऐसा क्यों ? हम लोगों के बाल-बच्चे बाद में कहाँ जाएँगें ? उन लोगों ने कहा कि यहाँ अभी कोई खदान खुलने नहीं जा रही है इसलिए आप लोग प्लॉट के आसपास की ज़मीन पर कब्जा कर लीजिए। नौकरी और मुआवज़ा तो दे ही दिया हैं अब और नहीं देंगे।

जब सीसीएल परेशान कर रही थी तो हमने लड़ाई झगड़ा तो नहीं किया पर पूंछा ज़रूर कि हम लोग कहाँ जाएँगे, कैसे जीएँगे? उन्होनें हमें झूठा आश्वासन दिया कि हमें घर

का मुआवजा 80-90 हजार रुपया देंगे और ढुलाई का खर्च अलग से। नया घर बनाने की मिट्टी भी देंगे। साथ ही पानी की टंकी भी बनवा देंगे।

लेकिन सब झूठ था। हमे केवल 18-20 हजार रुपया ही मुआवज़ा मिला है। ज़मीन का मुआवज़ा भी अच्छा नहीं मिला। हम लोग जब बहुत झगड़ा करे कि इतना कम कैसे हो सकता है तो कहा कि 1 नम्बर की जमीन के लिए 9 से 11 हज़ार, 2 नम्बर के लिए 4 से 5 हज़ार और 3 नम्बर की ज़मीन के लिए 3 हज़ार रुपया है। हमें 1 एकड़ पर 3 या 4 हज़ार ही दिया। हमने कहा ऐसा कैसे ? क्या 3 नम्बर की ज़मीन से 3 नम्बर का कोयला निकलता है ? 1 और 2 नम्बर नहीं निकलेगा ? लेकिन क्या करें ? बेंती में आपसी फूट ने मार दिया। जो भी पैसा मिला सब ने भूखे बाघ की तरह वह पैसा उठा लिया।

यहाँ बहुत गड़बड़ी हुआ है। मुखिया सब चीज की सूचना दबा लेता था। सब से नौकरी के फॉर्म भरवाने के लिए उसने किसी से 20000, किसी से 25000, किसी से 30000 रुपए लिए हैं। कितने लोगों ने पत्नियों का ज़ेवर बेच कर उस की मांग पूरी की है। उस सब पैसे से उसने अपने लिए कार खरीद ली। उसने बहुत लोगों को रुलाया है। हमारी ज़मीन पर बाहरी लोगों से नौकरी के फॉर्म भी भरवाए हैं। यहाँ नौकरी के अलावा जीविका की कोई व्यवस्था नहीं है। सब बेरोज़गार युवक बाहरी ठेकेदारों के यहाँ काम करते हैं जिसमें 35-40 रुपया दिहाड़ी मिल जाती है जो सिर्फ पेट पालने के लिए काफी है। थोड़ा बहुत हल्का फुल्का काम हम बुजुर्ग भी कर लेते हैं जैसे शादी विवाह का काम, उसमें हमें कुछ मज़दूरी मिल जाती है। मीटिंग या रैली में भी हम बुजुर्ग लोग ही जाते हैं।

यहाँ किसी प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं है। बिजली का सिर्फ खूँटा ही लगाया है। अस्पताल भी कोई नहीं है। जब स्कूल की माँग की तो कह दिया कि स्कूल का क्या करोगे, पैसा बचाओ। हमने माँग की कि जैसे आपने अपने ऑफीसर लोगों कीं कॉलोनी में पानी की टंकी की व्यवस्था की है, वैसे ही हमें भी दीजिए तो उससे भी स्पष्ट इंकार कर दिया। खैरियत है कि जोभिया है जो सबको पानी पिला रहा है। नहाना, कपड़े धोना वगैरह सब दामोदर नदी से होता है। हमारे विस्थापित होने से हमारे रिश्तेदार भी बहुत दुखी हैं। वे खुद कड़ते

हैं कि जितना अच्छा पुरानी जगह में लगता था यहाँ नहीं लगता। वे कहते हैं कि हमें यहाँ ऐसे डाल दिया गया है जैसे मछली को पानी से निकाल कर फेंक दिया गया हो। फिर भी आना जाना भी लगा रहता है और हम अच्छे से सब रिश्ते अपनी शक्ति के अनुसार निभाते हैं।

पुराना समय याद आता है तो आत्मा रोती है

वहाँ अच्छे से खेती बारी करते थे और अच्छे से खाते पीते थे। लेकिन क्या करें, कितना समय सोचते रहें ? वहाँ सभी लोग काम में व्यस्त रहते थे, यहाँ बेकार और बेरोज़गार बन कर रहना पड़ता है। माल मवेशी यहाँ ज्यादा पाल नहीं सकते क्योंकि पानी की कोई सुविधा नहीं है। पानी की बहुत तकलीफ है। जो पानी है दामोदर में वो एकदम काला है। खदान चालू कर के नाला बना कर निकासी नदी में प्रवेश करवा दी है जिससे गंदगी है। गंदे पानी, कोयले के धुएँ और धूल से अनेक प्रकार की भयंकर बीमारियाँ फैल रही हैं जो हम अपनी आँखों से देख रहे हैं। सारा शरीर काला हो जाता है और हवा में तो प्रदूषण होता ही है।

अब तो सब चीज चली गई और हम लोग भी बूढ़े हो गए हैं। हम लोगों को तो मर जाना है लेकिन महसूस होता है कि बाल बच्चों को तो दूध में पड़ी मक्खी के समान फेंक दिया है। भविष्य में उनका जीवनयापन कैसे होगा ? मन में दुख होता है पर फिर सहना ही पड़ता है। जब सभी लोग सीसीएल को स्वीकार कर लिए तो अकेला मैं क्या करता? एक आदमी के विरोध करने से कुछ नहीं होता।

अपने अनुभव के आधार पर मैं यही सुझाव देना चाहता हूँ कि सब जवान संगठित हो जाएँ। आपस में लड़ाई-झगड़ा मत कीजिए। सब चीज की जानकारी लीजिए और अपने गाँव में आ कर बताइए। संगठित हो जाने से बाहरी ठेकेदार आ कर हम लोगों को ठग नहीं पाएँगे। इसके अलावा अपने ही गाँव में भी सतर्क रहिए कि अपने ही लोग सीसीएल में घुस कर दलाली तो नहीं कर रहे और पैसे के लालच में आ कर सीसीएल की तरफ तो नहीं खिंच गए। दलाली मत होने दीजिए और एकता बनाए रखिए। जो भी बात हो वह

सबके सामने एक साथ बात हो। आपसी मतभेद हो कर कोई भी नौकरी या मुआवज़े की बात न हो। आँदोलन में महिलाएँ संगठित हो कर शामिल हों और हर तरह से आपसी सहयोग हो। तभी सीसीएल का ज़ोर नहीं चलेगा।

तिलक न दो तो अच्छा लड़का नहीं मिलता।

हमारे यहाँ शादी में पूरे समाज का समर्थन रहता है। जैसा सब करते हैं वैसे ही होता है। अब तो शादी पंडित द्वारा होने लगी है। आजकल दहेज के साथ तिलक भी चलने लगा है। पहले ऐसा नहीं था। हम लोग केवल लड़की को दहेज देते थे और लड़के को कपड़े लत्ते के सिवा कुछ नहीं देते थे। आज तो तिलक दीजिए तब शादी होगी,तब ही अच्छा लड़का मिलेगा नहीं तो गंवार से शादी होगी। ऐसा होने से हमको लगने लगा है कि आज बेटी की मान मर्यादा कम हो गई है। लड़की वालों को हमेशा लड़के वालों के आगे झुक कर रहना पड़ता है। ये प्रथा समाज में बढ़ जाने से लड़की का पिता अपने आप को मजबूर महसूस करने लगा है। पहले बेटी का बाप होने से खुशी होती थी लेकिन आज समाज में यह प्रचलन होने से बेटी का बाप चिन्तित है। जिसके पास रुपया है वह तो दे देता है पर जो मेहनत मज़दूरी कर के जीता है वह तिलक दहेज कहाँ से लाएगा। इसके कारण लड़कियाँ मर रही हैं और मारी जा रही हैं। हम तो यही प्रार्थना करेंगे कि इस भयानक बीमारी से समय रहते बचा जाए।

सद्धन प्रजापति - 50 वर्ष - बेंती गाँव

साक्षात्कार - 4

नाम : संजय कुमार टुडू
आयु : 26 वर्ष
स्थान : उरीमारी
भेंटकर्ता : कामिल सोरेन

संजय एक मैट्रिक पास, समझदार, विवाहित युवक हैं। इनके दोनों बच्चे स्कूल में पढ़ते हैं तथा औरों की अपेक्षा इनके परिवार में शिक्षा का स्तर ऊँचा है। यह उत्तरी खदान में नौकरी करने के साथ साथ एक फोटो फ्रेम की दुकान भी चलाते हैं। इनके पड़दादा, इत्यादि उरीमारी में आ कर बस गए थे और यह यहीं पैदा हुए। इन्होंने बचपन मे काफी कठिनाईयों का सामना किया क्योंकि इनके शराबी पिता परिवार की देखभाल नहीं करते थे। काफी दुखों को झेलने के बावजूद इनमें सामाजिकता की भावना भरी हुई है और यह न सिर्फ सफलता से अपनी राह खुद बना रहे हैं बल्कि दूसरों को भी रास्ता दिखा रहे हैं।

हमारे पड़दादा चरही चनारो के रहने वाले थे। उनका ससुराल यहाँ उरीमारी में था। उस समय यहाँ ज्यादा लोग नहीं थे, कुछ ही परिवार थे। तो मेरे पड़दादा के ससुर तथा ज्येष्ठ साले ने उनसे अनुरोध किया कि चूँकि यहाँ समसाव करने वाला, देवी देवताओं के आधार पर संभालने वाला कोई नहीं है और मेरे पड़दादा टुडू हैं, देवी देवताओं को भी प्रसन्न कर सकते हैं और भूत प्रेत, इत्यादि से गाँव की सुरक्षा भी कर सकते हैं, इसलिए मेरे पड़दादा को उरीमारी आ कर बस जाना चाहिए। उन्होंने अपने ससुराल वालों का अनुरोध स्वीकार किया और यहाँ आ कर बस गए। उन्हें यहाँ का नायक बना दिया गया। उनके तीन भाई थे, वे भी इधर ही बस गए।

उनके बेटे, यानि मेरे आज्जा का नाम था बाबूराम माँझी। वे लोग 6 भाई थे। मेरे आज्जा और उनके दो भाई रेलवे में नौकरी करते थे। परदादा खुद बड़कागाँव थाने में चौकीदार का काम करते थे। तो घर में काफी पैसा था। उन दिनों अंग्रेज़ों के समय में तीन साल तक रसीद न कटाने पर जमीन नीलाम कर दी जाती थी। पैसा रुपया होने के कारण मेरे पड़दादा जहाँ जहाँ ज़मीन नीलाम होती थी वहीं उसे खरीद लेते थे। इस प्रकार उन्होंने काफी ज़मीन अर्जित कर ली। और फिर उस ज़मीन का और विस्तार भी किया। वह अंग्रेज़ों के समय से ही पढ़ना लिखना जानते थे और मेरे आज्जा लोगों को भी उन्होंने शिक्षा दिलवाई थी।

जब मैं 8-9 साल का था मेरी माँ गुजर गई। पिताजी बहुत शराब पीते थे और बहुत हल्ला करते थे। मेरे बड़े भाई भाभी थे। आज्जी कुछ ख्याल रखती थी। पर भाई भाभी बहुत डाँटते थे। भूख लगने पर खाना माँगता तो मिलता नहीं था। पिताजी मुझे गाय चराने भेज देते थे। मैं हमारी गायों के साथ औरों की गायें भी चराता था। रात को पिताजी के हल्ले के डर के मारे वहाँ उन्हीं लोगों के घर पर सो जाता था। पता नहीं कैसे पिताजी ने गाँव के स्कूल में मेरा नाम लिखवा दिया। पिताजी शराब पी कर हल्ला करते और बोलते कि मन लगा कर नहीं पढ़ोगे तो होटल में थाली कटोरी साफ करोगे। बस यही चीज मेरे मन में बैठ गई। बस उसी समय से सोच लिया कि मन लगा कर पढ़ना है। गाय बकरी भी चराते थे और पढ़ाई भी करते थे। फिर पिताजी ने दूसरी शादी कर ली तो नई माँ आ गई। वह खाने पीने का अच्छा ख्याल रखती थी। फिर होते होते मैट्रिक भी पास कर लिया।

सीसीएल ने आदर्श गाँव बनाने का वादा किया था

सीसीएल ने हमसे यह कह कर ज़मीन ली कि वह हमें एक आदर्श गाँव बना कर देंगे और हर किसी को पीढ़ी दर पीढ़ी नौकरी देंगे। पर उन्होंने कोई वादा पूरा नहीं किया। जब यह सब हुआ, तब मैं बहुत छोटा था पर आज्जा लोग बताते हैं कि नेता लोग भी यही बोलते थे कि हमें सीसीएल की बात मान लेनी चाहिए। सीसीएल की मैनेजमेंट भी सबसे बात नहीं करती थी। सिर्फ नेता लोगों से बात की जाती थी। और नेता भी सभी लोगों से विचार विमर्श नहीं करते थे। सिर्फ कुछ ही लोगों से बात करते थे। सीसीएल और नेता हमसे बोले कि

रोड, पानी, बिजली सब चीज की सुविधा दी जाएगी। न आदर्श गाँव दिया, न सही ढंग से नौकरी दी और न ही सही स्थान पर विस्थापित ही किया। बस प्रलोभन दे कर जमीन हथिया ली ।

हमने ठान ली कि हम शोषण नहीं सहेंगे

आठवीं नौवीं कक्षा से ही मैंने लोगों को समझाने का काम शुरू कर दिया था। लोगों ने हमें काफी टोका भी लेकिन हमने भी मन में ठान लिया था कि जो उरीमारी में शोषण हो रहा है उसे हम नहीं सहेंगे। इसके कुछ दिन बाद मेरे मंझले भाई का सीसीएल में नौकरी के लिए इंटरव्यू हुआ। उसके 3-4 महीने बाद कई लोगों का ज्वॉइनिंग लेटर आ गया। लेकिन मेरे भाई का नहीं आया। पिताजी दारू पी कर गाली गलौज करते कि उन लोगों ने अपने आदमियों को नौकरी दे दी है और हमें ठग लिया है। मुझे भी यही लगने लगा। मैं ग्यारहवीं में पढ़ता था, खाता-खतियान, प्लॉट नं वगैरह सब पहचानता था। सोचा जा कर पता कर आएँगे। सो साईकल से बरकाकाना चला गया जहाँ जी.एम.ऑफिस था। ए.के. मुखर्जी तब रेवन्यू ऑफिसर थे। मैं कुर्सी पर उनके सामने बैठ गया और पूछा कि पोंटंगा सीमा के 39 खाता में नौकरी किसको मिली है ? उसने कहा कि लखन बूढ़े के दामाद को। मैंने एकदम कहा कि सर वह तो दामाद है जबकि इस ज़मीन के लिए बेटे भी हैं, मेरे मंझले भाई को नौकरी मिलनी चाहिए। उसने कहा जाओ अपने चाचा लखन बूढ़े और मुखिया से पूछ कर आओ, यहाँ मेरा दिमाग क्यों खराब कर रहे हो ? और मुझे अपमानित कर के उसने मुझे कुर्सी से उठा दिया। मेरे कलेजे में जैसे सुई चुभ गई। मुझे लगा कि साहिब मेरे बाप दादा की ज़मीन पर ही मुझे कुर्सी से उठा दिया। ज़मीन तो ठेपासाही कर के ठग ही ली, अब नौकरी से भी ठगना चाहते हो। हमने ठान लिया कि अब हम और लोगों की जमीन नहीं जाने देंगे। एक दिन इन पदाधिकारियों को झुकाएँगे। तब से हम दृढ़ता से राजनीति में आ गए। सोनाराम बूढ़े को अपना गुरू मान लिया और उसके पीछे घूम घूम कर लोगों को समझाने लगे। पिताजी चाचा वगैरह बहुत डाँटते थे कि बेकार घूमता फिरता

रहता है। मैं डाँट भी सहता, स्कूल भी जाता और लोगों को भी समझाता। इससे मेरे दिमाग पर इतना बोझ पड़ गया कि मैं पागल हो गया।

सब लोग मुझे पागल पागल कहते थे

मुझे तो याद नहीं लेकिन बताते हैं कि मैं तीर-धनुष ले कर कोलियरी चला जाता था। साहिबों के पीछे मारने को दौड़ता था। मुखिया के घर पर भी गाली गलौज की। वैद्य-ओझा वगैरह को दिखाया पर कोई फायदा नहीं हुआ। सब कहते थे पागल हो गया है, अब नहीं बचेगा। फिर मुझे काँके ले गए। बाप रे बाप, वहाँ तो जेल से भी ज़्यादा कष्ट था। वहाँ बिजली का करंट दिया गया। 1 महीने बाद मैं थोड़ा ठीक हुआ तो पिताजी मुझे घर पर ले आए। लेकिन 1 हफ्ते बाद फिर पागल हो गया, फिर काँके पहुँचा दिया गया। जब ठीक हो कर घर आया तो दिन रात माँ बाप, भाई भाभी डाँटते रहते थे। जहाँ कहीं गाँव मुहल्ले में जाता सब लोग पागल पागल कहते। मेरे मन में आया कि मैं जीने लायक ही नहीं हूँ, इस पृथ्वी पर रहने लायक ही नहीं हूँ। यह सोच कर मैंने काँके की दवा की 5-6 गोलियाँ एक साथ खा लीं कि मर जाऊँगा। लेकिन मरा नहीं, नशे में दो दिन सोता रहा। मैं बहुत परेशान था। एक दिन माँ ने गाली दी तो दिल में लग गई। सोच लिया कि जब कोई मुझे इंसान ही नहीं समझता तो इस दुनिया में क्यों रहूँ ? शाम को मरने के ख्याल से पहाड़ चला गया। घोर अंधेरा होने पर चट्टान के नीचे गिर गया और सोचा शायद कोई बाघ, भालू, भूत ही मुझे मार डाले।

लेकिन मुझे कुछ नहीं हुआ। जब किसी तरह नहीं मरा तो सोचा कि जब तक भगवान अपनी इच्छा से नहीं ले जाएँगे तब तक मुझे कुछ नहीं होगा। फिर दिमाग संभला और सोचा कि टेलीविज़न ट्रांज़िस्टर ट्रेनिंग करूँगा। पैसा नहीं था एडमीशन खर्च के लिए इसलिए दारू बना कर बेचा। उसी से ट्रेनिंग शुरू किया। वहाँ कभी कभी भुरकुण्डा में एक फोटा फ्रेमिंग की दुकान पर बैठते थे। एक दिन पता नहीं क्या विचार आया कि दुकान वाले बूढ़े से अनुरोध किया कि हमको भी फोटो फ्रेमिंग का काम सिखा दो। उसको गुरू बनाया और छोटे बच्चे की तरह

उससे एक एक चीज सीखी। उसने ऐसा हुनर सिखाया कि मुझे लगा कि वह इसान नहीं मेरे लिए चांदो बोंगा है, भगवान है। फिर अपनी दुकान खोल ली जो हमारी जीविका का आधार है। सोचा कि शादी हो जाने और बच्चे हो जाने से इसी से आगे रोजी रोटी चलेगी। लेकिन हमारे मन से बात नहीं निकली थी कि कैसे मुखर्जी ने हमें कुर्सी से उठाया था। बस सोच लिया कि अब चाहे जान चली जाए लेकिन हम लोगों को ज़रूर समझाएँगे० और शोषण के विरूद्ध संघर्ष जारी रखेंगे।

मैंने पहले सत्य और अहिंसा का मार्ग अपनाया

मैंने सत्य यानि ईमानदारी से लोगों को समझाया। अहिंसा से मेरा मतलब मैं पहले जुलूस, प्रदर्शन, धरना, इत्यादि ही किया करता था। बहुत लोग मेरे संगठन में शामिल होने लगे। अलग अलग राजनीतिक दल जैसे कॉंग्रेस, कम्युनिस्ट, इत्यादि भी आने लगे। धरना, जलूस के बावजूद भी अधिकारी लोग हमारी बात अनसुनी कर देते थे तो फिर हम लोग धीरे धीरे हिंसा पर भी उतर आए। जब माँगने पर नहीं मिला तो मैंने लड़कों से कहा कि एक एक कर के सबको देखो, मार पीट भी होने लगी। केस मुकद्दमा भी हुआ पर दरोगा हमारी बात समझता था इसलिए जेल नहीं हुई। लोग मेरे साथ शामिल होने लगे तो मेरा मन तथा हौसला और भी बढ़ गया।

सीसीएल मैनेजमेंट ने हमारे आंदोलन को दबाने की बहुत कोशिश की किंतु फिर डर से चुप हो गई। मैंने भी यही सोचा कि मेरे पुरखों की ज़मीन है, इस पर मर मिट जाऊँगा पर ज़मीन नहीं छोड़ूँगा। 1988 में जरजरा कॉलोनी में सीसीएल से मार पीट किया तो उसी समय से यह कॉलोनी बंद हो गई और इधर की योजना भी समाप्त हो गई। मुझे जेल कर दी गई। लेकिन परिणाम यह हुआ कि मेरे मंझले भाई सहित 104 लोगों को नौकरी मिली। मुझे लगा कि मेरा आंदोलन व्यर्थ नहीं गया। मेरा हौसला और बढ़ गया। जेल से निकलने के बाद मैं और ज़ोर शोर से आंदोलन में लग गया। मेरे साथ जितने लड़के लोग थे उन सबको ठेका दिलवाना शुरू किया। सीसीएल के साहिब लोग भी मुझसे डरने लगे थे। मैंने

उनसे कहा कि मेरा हक मुझे दीजिए, डरने की कोई बात नहीं है। उन्होंने कहा क्या चाहिए ? मैनें कहा कि नौकरी दीजिए। बाहरी लोगों को ठेका मत दीजिए। मैंने अपने साथियों को ठेका दिलवाया। किसी को 5000 रुपए, किसी को 10,000 रुपए पूंजी भी दी। पूंजी मैंने इसलिए दी क्योंकि वह गरीब बेरोज़गार थे। शुरू से मेरे साथ थे। मैं नहीं चाहता था कि मेरे पीछे आने से उनके बाल बच्चे भूखे रहें। इसलिए किसी को ठेका दिलवाया, किसी की नौकरी दिलवाई। वे लोग आज भी मेरा नाम लेते हैं।

फिर मैंने सोचा कि थोड़ा बहुत पढ़े लिखों को ठेका, इत्यादि मिल जाता है लेकिन बाकी बेरोज़गारों का क्या होगा ? इसलिए लोकल सेल डिपो खोलने का विचार आया। जिससे कि अनपढ़, विधवाओं और बेसहाराओं को भी रोज़गार मिल जाए। तो सेल डिपो खोलने की खातिर जलूस आँदोलन शुरू कर दिया। बहुत कोशिश की, कह दिया कि जब तक सेल नहीं खोलोगे कोई प्रोजेक्ट चलने नहीं देंगे। उनको भी पता था कि संजय टुडू जो कहता है करता है। प्रोजेक्ट ऑफीसर भी आखिर मान गया। मुखिया निर्मल यादव इसके खिलाफ था लेकिन जब उसके घर जा कर उसको समझाया कि इसी में बच्चे बूढ़ों सबका फायदा है तो वह भी मान गया। और अंततः सेल डिपो खुल ही गया।

साहब के टेबल पर नहीं गाँव में ही बात करेंगे

राजनीतिक पार्टी की नीति है कि साहिब की टेबल पर सिर्फ प्रतिनिधि बात करेगा, बाकी लोग नहीं। इसलिए मैं पार्टी से दर किनार हो गया। मैंने सोचा इस धारणा से काम नहीं कर सकता। इसलिए मैंने अपनी अलग विस्थापित कमेटी बनाई। 11-12 लड़कों ने मिल कर इसे बनाया। हमारी रणनीति थी कि साहिब की टेबल पर प्रतिनिधि को बात करने नहीं भेजेंगे। बल्कि गाँव में, जहाँ ज़मीन जा रही है, वहाँ उनको बुला कर एक साथ सभी जनता बात करेगी। वो हमें अपनी समस्या बताएँगे और हम उन्हें अपने दुख तकलीफ सुनाएँगे।

हमने एक बार जी. एम. साहब, रेवन्यू पदाधिकारी, आदि को बुलाया भी। साथ अखबार वालों को भी खबर दी, वीडियो कैमरा वाले को बुलाया। ये लोग आए।

हमने जब अधिकारियों से नौकरी मुआवज़े के नीति नियम पूछे तो बताया कि मैट्रिक पास को 2 एकड़ पर नौकरी, नहीं तो 3 एकड़ पर नौकरी, अगर नौकरी स्वीकार नहीं हैं तो 20 वर्ष तक 500 रुपया महीना तय। तब हमने गलत सलत से दी हुई नौकरियों के कागज़ात दिखाए। उन्हें आड़े हाथों लिया और पूछा कि जो लोग यहाँ के हैं भी नहीं उन्हें कैसे नौकरी दी गई। छपरा के किसी नेता के आदमी को 6-7 डी मी पर ही नौकरी कैसे दी गई ? जब अखबार वाले ने भी सवाल करना शुरू कर दिया तो तो वे काफी डर गए और उठ कर ही चले गए। तो हमारा यह आंदोलन एक प्रकार से सफल नहीं हो पाया।

मैं चाहता हूँ कि जो कुछ इस क्षेत्र में हो रहा है वह अखबार और टीवी द्वारा सारे देश की जनता को पता चले कि किस तरह हमारा शोषण कर के हमारी ज़मीन छीनी जा रही है। मैं केवल बात कर के ही लोगों को समझा सकता हूँ और आंदोलन से ही उनको उनका हक पाने का रास्ता दिखा सकता हूँ।

हम लोग सादा सोरेन हो गए

हम लोग सुकरी पुजा, बढाइत पूजा में सिंदूर नहीं देते हैं जैसे कि और लोग करते हैं। हम लोग चावल के आटे से ही वह रस्म पूरी करते हैं। हम लोग के इतिहास में 2 भाई थे। दोनों पूजा करने नदी के पार गए। लेकिन वे सिंदूर ले जाना भूल गए। तब छोटा भाई सिंदूर लाने घर आया। इसी दौरान नदी में बाढ़ आ गई । बड़ा भाई उस पार और छोटा भाई नदी के इस पार रह गया। तब बड़े भाई ने छोटे को आदेश दिया कि तुम उधर ही पूजा करो, मै यहाँ कर लूँगा। बड़े भाई को बिना सिंदूर के ही पूजा करनी पड़ी और चावल के आटे से उसने सारी रस्म पूरी करी। तभी से हम सादा सोरेन हो गए क्योंकिं हम बड़े भाई के वंशज हैं। छोटे भाई के वंशज सिंदूर सोरेन हैं क्योंकि वह सिंदूर का उपयोग करते हैं। हम केवल विवाह के दौरान दुल्हन को अपना बनाने के लिए सिंदूर का उपयोग करते हैं।

सोमर सोरेन - 70 वर्ष - रास्का टोला, मौजा पोटंगा

साक्षात्कार - 5

नाम : फूलमनी सोरेन
आयु : लगभग 30 वर्ष
स्थान : गंधौनिया, सोहादी
भेंटकर्ता : कामिल सोरेन

फूलमनी सोरेन एक युवा विधवा स्त्री हैं जिनके पति का कुछ वर्ष पहले ही देहान्त हुआ है। इनके 4 बच्चे हैं -2 लड़के व 2 लड़कियाँ। इनके पति सीसीएल में नौकरी करते थे किंतु उनके देहान्त के बाद भी फूलमनी को पति की जगह पर नौकरी अभी तक नहीं मिली है। खदान में होने वाली ब्लास्टिंग से इनका घर बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया है। जीवनयापन के लिए यह थोड़ी बहुत खेती करती हैं और लोकल सेल डिपो में भी काम करती हैं। इनके रोगग्रस्त बूढ़े ससुर भी इन्हीं के साथ रहते हैं। फूलमनी का जीवन अत्यंत कष्ट से कट रहा है क्योंकि 4 बच्चों व 1 वृद्ध को पालना कोई आसान कार्य नहीं है। फिर भी फूलमनी ने हिम्मत नहीं हारी है और हर हालत में अपने बच्चों को शिक्षा दे कर उनका भविष्य सुधारने के प्रति दृढ़प्रतिज्ञ हैं।

मैं जंगल, पहाड़ के क्षेत्र की हूँ और मुझे ऐसी ही जगह रहना अच्छा लगता है। यहाँ किसी भी चीज की शोभा नहीं है। खेत या हरियाली कुछ दिखाई नहीं देती। सिर्फ डिपो ही दिखाई देता है, उसमें भी बस आग ही जलती दिखाई देती है। सिर्फ गाड़ियों का शोर ही सुनाई देता है। जंगल, पहाड़ खेत खत्म हो जाने से तो ऐसा लगता है कि जैसे हम ही खत्म हो गए हैं।

मेरे आने से पहले यह खदान नाले के उस पार थी। वहाँ हमारा एक खेत भी था। खेत तो अब भी है पर अब दूसरे लोग जोतते हैं। मेरे दोनों लड़के छोटे हैं और ससुर बूढ़े

हैं, कौन जोतेगा ? पहले नयाडुबा तक हम लोगों के खेत थे, बाड़ी थी। मैंने खुद अपने हाथों से खेत बनाया था। मकई, बाजरा, धान, महुआ, गोंदली, सब कुछ लगाते थे और सुख से रहते थे। अब यह सब कहाँ से लाएँगे ? पहले खेती कर के जीविका चलाते थे, अब अगर कोयले की गाड़ी मिल जाए तो मुश्किल से जीविका चलती है।

औरतों के पास कुछ करने को नहीं है

जब मैं नई नई आई थी, तब हम औरतें जंगल जा कर जलावन, फल, फूल, साग सब ले कर आती थीं। कोई खदान, मज़दूर, ठेकेदार कोई नहीं था। हम औरतें खेत में काम करती थीं या जंगल जाती थीं। सबके लिए काम था। अब औरतें खाली बैठी रहती हैं। हम औरतों को ही पता है कि खदान ने हमारी क्या हालत कर दी है। पहले सारे साल खेतों में काम कर के धान उगाते थे, दाल उगाते थे। दोपहर का खाना खेतों में खा कर शाम को घर लौटती थीं। खेत जोतती थीं, बीज बोती थीं, कटाई करती थीं, जंगल से खान पान की सामग्री लाती थीं। घर गृहस्थी और खेती बारी के काम में एक दूसरे का हाथ बंटाती थीं।

अब तो औरतों के पास बस एक ही काम है। दामोदर नदी से जा कर पानी भर के लाना। बारिश में बड़ी मुश्किल होती है क्योंकि पानी बाढ़ से गंदा हो जाता है। गर्मी में रेत में गड्ढा खोद कर पानी निकालते हैं। बस अब औरतों के पास एक यही काम है और कुछ करने के लिए नहीं है। खदान आने से कोई फायदा नहीं हुआ है बल्कि डूब गए हैं। अगर अभी भी हमसे कोई कहे कि पहाड़ धाँसो तो धाँस सकते हैं लेकिन यहाँ तो कुछ भी नहीं कर सकते। सब ज़मीन सरकार के हाथ में चला गया। जब बाप दादा लोग ने ही ज़मीन सरकार को दे दिया तो हम क्या कर सकते हैं। अब चाहे भूखे रहें या कुछ खा कर रहें, बस जैसे तैसे अपनी जीविका चला रहे हैं।

विधवा जीवन में बहुत कष्ट है

मेरा पति 4 भाई में संझला भाई था। मेरे ससुर ने 3 लड़कों का नौकरी के लिए नाम लिखवाया, 1 छोटा देवर को अभी नौकरी नहीं मिली है। वह बेचारा भी हमारे पास ही

आकर रोता है। कहाँ जाएगा ? मेरे ससुर भी तो मेरे ही साथ रहते हैं। मंझला भाई कुछ थोड़ा बहुत सहयोग कर देता है लेकिन बड़का तो बिलकुल नहीं देखता। मैं अकेली विधवा औरत क्या क्या करूँ ? किसी को भी हमारी फिक्र नहीं है।

जब मेरे पति की मृत्यु हुई हम सोहादी में रहते थे। मुझे शादी के कुछ दिन बाद ही एक सुरही चावल और एक गुच्छा मकई दे कर अलग कर दिया था। उसी को खाकर मैं रही, गृहस्थी भी जमाई और वहाँ घर भी बनाया। उस समय करमा का त्योहार था। वह सोमवार की हाजिरी लगा कर आया और कहा कि शनिवार को आऊँगा, बच्चियों के लिए नए कपड़े, वगैरह लाऊँगा। लेकिन फिर नहीं आया।अचानक बीमारी से खत्म हो गया। उस समय किसी ने मेरा सहयोग नहीं किया। मैंने उसी के कमाए पैसों से उसका क्रियाकर्म वगैरह सब अकेले ही किया।

सोमवार को नौकरी माँगने गई तो कह दिया कि नहीं मिलेगी। मैंने कहा उसने शुक्रवार को हाजरी लगाई, शनिवार को नहीं लगाई क्योंकि गुजर गया, आज सोमवार को मैं खड़ी हूँ, क्यों नहीं देंगे नौकरी ? तो कह दिया कि 5-6 साल लग जाएँगे। इतना दिन मेरे बाल बच्चों को, उसके बूढ़े माँ-बाप को कौन पालेगा ? लेकिन आज तक भी नौकरी नहीं मिली। मेरा छोटा देवर ही मेरे लिए दौड़ धूप करता है। सब कुछ अपने आप करना होता है। नहीं करूँगी तो क्या खाऊँगी और क्या सबको खिलाऊँगी ? थोड़ी सी मकई लगाती हूँ, दो तीन पैला धान लगाती हूँ लेकिन उससे क्या होता है ? सेल डिपो में गाड़ी मिल जाता है तो कोयला लोड करती हूँ। 30 या 40 रुपये मिल जाते हैं। लेकिन ससुर भी बीमार हैं, उनकी दवा दारू भी सब उधार ले कर ही करना पड़ता है। कोई भी मदद नहीं करता है।

अभी तो ससुर जीवित हैं तो मुझे भी साहस है। जिस दिन नहीं रहेंगे उस दिन पता नहीं मेरा क्या होगा ? सब लोग मेरे बारे में बात करते हैं। कहते हैं मैं दूसरी शादी कर रही हूँ। अपने लिए आदमी ढूँढ रही हूँ। यह नहीं सोचते कि मैं कितनी मुशकिल से अपने बाल बच्चे पाल रही हूँ। सब जलते हैं और सोचते हैं कि यह हम से अधिक तो नहीं कमाती

फिर बच्चों को कैसे शिक्षित कर रही है ? मैं कहती हूँ तुम भी पढ़ाओ। हम अपने बच्चों को बुद्धि और विचार ही तो दे सकते हैं ताकि उनका भविष्य बन सके। वह भी यही चाहता था। मैं आदमी होती तो कुछ करती। ससुर बेचारे बूढ़े हैं। सब ज़िम्मा छोड़ चुके हैं। बच्चे मेरे छोटे हैं। ब्लास्टिंग होने से घर सारा गिर रहा है। नौकरी मिलती नहीं। किसी को मेरा विचार नहीं है। कोई नहीं सोचता यह अकेली औरत घर कैसे बनाएगी ? बुनियाद कैसे कोड़ेगी, ईंट का बनाएगी या मिट्टी का बनाएगी ? बस यही सोचते हैं कि दूसरा आदमी खोज रही है।

ब्लास्टिंग से सारा घर टूट गया है

सारा घर हिलने लगता है। बड़े बड़े पत्थर आ कर गिरते हैं और सब जगह धूल ही धूल भर जाती है। अब हमकों यहाँ से उठा देंगे। लेकिन वहाँ जगह कितनी कम है। जानवर नहीं रख सकते। बच्चे कहाँ रहेंगे, बूढ़े कहाँ रहेंगे, और मेहमान लोग को हम कहाँ रखेंगे ? हमने तो जगह भी नहीं देखी। आदमी लोग देख कर आ गए। हम औरतों से तो किसी ने नहीं पूछा। वो सारी जगह चट्टान पर है। घर बनाने के लिए मिट्टी भी नहीं है। ईटा-पत्थर का खर्चा, मज़दूर का खर्चा, वहाँ सामान ले जाने का खर्चा कहाँ से देंगें? सीसीएल केवल 7000/- रुपये दे रही है चट्टान में घर बनाने के लिए। हम लोग भी बस केवल बुनियाद कोड़ देंगे। फिर उनसे कह देंगे कि इसी में 7000 खत्म हो गया। विश्वास नहीं होता तो खींच कर ले जा कर दिखा देंगे। अभी आदमी लोगों को बोलने दो, फिर हम लोग बोलेंगी। हमारा कुछ ठीक नहीं है, हाथ भी चबा सकते हैं।

घर उठाना क्या आसान है ? यह नीम का पेड़ देखिए। पत्थर में गड्ढा कोड़ कर छोटा से रोपे थे। इसलिए बच्चे बोलते हैं कि माँ जब हमको यहाँ से भगा देंगे तो इसको साथ ले जाएँगे। मैं कहती हूँ कैसे ले जाएँगे ? पर बच्चों को तो अपने लगाए पेड़ से भी दया माया है। कहते हैं कि रोपे हुए पेड़ में तो चिड़िया रहने पर बैठने के लिए बोलती है। पेड़ ही नहीं रहेगा तो बैठने के लिए कौन बोलेगा ?

ऐसे ही अगर धरती माँ ही नहीं रहेगी तो रहने को कौन बोलेगा? फिर हमारे बच्चों का आगे क्या होगा ? हम अपने बच्चों के भविष्य के लिए ज़िम्मेदार हैं। मेरे बच्चों के पिता नहीं हैं। मुझे ही उनका रास्ता बनाना है। उनको आगे अच्छा आदमी बनाना है। उनको उनकी परम्परा-रीति संस्कृति सिखानी है। उनको बताना है कि उनके दादा पुरखे अच्छे लोग थे जो प्रकृति के साथ मिल कर चले और प्रकृति से अपनी जीविका चलाई। यही सीख आप अपने से छोटों को दो और यही सीख मैं अपने बच्चों को देती हूँ।

सरना स्थल में आदिवासी वृद्धा, खदानों से सरना भी नष्ट हो रहे हैं।

साक्षात्कार - 6

नाम : रामप्रसाद गंझू
आयु : 45 वर्ष
स्थान : चिरैयाटाँड
भेंटकर्ता : शंकर गंझू

रामप्रसाद गंझू 3 भाईयों में से मंझले भाई हैं और अपनी 2 पत्नियों तथा बच्चों के साथ चिरैयाटाँड में रहते हैं। इनके 5 लड़के और 2 लड़कियाँ है। जिनमें से 1 लड़के और 1 लड़की की शादी कर चुके हैं। इन्हें ज़मीन के बदले में सीसीएल में नौकरी तो मिली किंतु सीसीएल से मिले मुआवज़े से और कम्पनी द्वारा गाँव की विस्थापना करने से यह बहुत अप्रसन्न हैं। इसके लिए यह गाँव वालों की आपसी फूट को दोषी मानते हैं और आपसी एकता के खत्म होने का ज़िम्मेदार बाहर के लोगों और उनके प्रभाव को ठहराते हैं।

हम पिछली 2 पीढ़ी से बाड़ीसिमर में रहते हैं। बड़े बूढ़े बताते हैं कि उससे पहले बजरमड़ी और भड़मा में भी पुरखे रहते थे। बाड़ीसिमर में हम गंझुओं के लगभग 25 घर थे और एक घर तूरी लोगों का था। वहाँ हम खेती बाड़ी किया करते थे, मकई, मड़वा,चना सब उगाते थे और अच्छे से गुजारा करते थे।

सिर्फ एक को नौकरी मिलेगी तो बाकी परिवार कहाँ जाएगा ?

सी सी एल ने नौकरी के लिए काफी गड़बड़ की है। झूठमूठ ठेपा लगवा कर बहुत लोगों की नौकरी हड़प ली गई है। लेकिन जब हम लोगों की बाड़ीसिमर में ज़मीन जाने लगी तो हमने भी लाठी डंडा ले कर खूब लड़ाई लड़ी। सीसीएल ने खदान खुलने से करीब एक

खदान के आने से संयुक्त परिवार टूट गया है।

अगर किसी के चार बेटों में से एक को नौकरी मिली है तो आगे चल कर बहुत समस्या उत्पन्न हो जायगी और हो रही है। पहले उतनी ही ज़मीन से चारों भाई खेती कर के जी खा रहे थे। लेकिन ज़मीन के खदान में जाने से एक भाई को तो नौकरी मिल गई लेकिन बाकी तीन भाई की जीविका तो नष्ट हो गई। इसलिए खदान के आने से पारिवारिक तनाव बहुत बढ़ गया है। भाई-भाई में फूट हो जाना, अशांति के चलते संयुक्त परिवार का टूट कर तितर-बितर हो जाना- यह सब उलझन खदान ही ने खड़ी की है।

भजु गंझू – 80 वर्ष – हड़गड़ी टोला

साल पहले हम लोग को ज़मीन अधिग्रहण का नोटिस दिया। तब विश्रामपुर, जेहलीटाँड, बड़कीटाँड, डकरा और बाड़ीसिमर, 5 टोला के लोगों ने बैठक किया कि जान लिया जाए कि अगर सीसीएल हम लोगों की ज़मीन लेगी तो हम लोगों की जीविका कैसे चलेगी। फिर दूसरी मीटिंग साहब लोगों के साथ हुई जिसमें तय किया कि ज़मीन के आधार पर नौकरी दी जाएगी। तब हम लोगों को न इतनी जानकारी थी और न ही हमारा संगठन इतना मजबूत था। जो दर तय की उसी पर हम मान गए कि हर तीन एकड़ के बदले एक नौकरी दी जाएगी। मुआवज़े की दर भी कम ही थी। घर का मुआवज़ा भी बहुत ही कम लगाया। हमारा इतना बड़ा घर था, उसके भी मात्र 9000 रुपये दिए। उन दिनों सब बात मेरे पिताजी ही तय किया करते थे। उन्हीं की सारी बात हुई थी सीसीएल से। वरना हम होते तो कभी इतने कम पैसों पर न मानते।

सीसीएल ने हमारे लिए कोई व्यवस्था नहीं की

हमको केकराहीगढ़ा में आए कोई 13 वर्ष हो गए। सीसीएल ने हमको भगाया तो नहीं

लेकिन जब हम लोगों को ज़मीन का पैसा दे दिया तो हमको छोड़ना ही पड़ा। वहाँ रहने का हमको कोई हक नहीं रह गया था। बाड़ीसिमर में वो लोग मशीनें चालू कर दिए थे और हॉलपैक से घर के सामने पिछवाड़े मिट्टी डालने लगे। सारा मिट्टी घर ही में जब डम्प करने लगे तो कब तक ऐसे चलता ? हम लोगों को उठना ही पड़ा। गाँव का संगठन भी ऐसा मजबूत नहीं था कि सब मिल कर बोलते कि जब तक दूसरी जगह, दूसरा घर नहीं दोगे हम नहीं उठेंगे। सब लोग तितर-बितर हो गए थे।

जब वहाँ से उठे तो 6 महीने जामदीह के खुले मैदान में झोंपड़ी बना कर रहे। क्योंकि कहीं अच्छे से व्यवस्था हो ही नहीं पाती थी। सब जगह मिट्टी डम्प होती थी। हमने सोचा जब तक यह स्थिर नहीं हो जाता तब तक कहाँ घर बनाएँगे ? छः महीने खूब तकलीफ सही, सब जगह घूम कर देखा, फिर देखा कि यह जगह सही है। यहाँ नाले के उस तरफ सीसीएल की स्थायी कॉलोनी है। तब यहाँ जंगल था।

हमने कुछ समय और इंतजार किया कि देखें सीसीएल हमारे लिए क्या व्यवस्था करती है। जब कुछ नहीं किया तो फिर हम ही ने यहाँ जंगल झाड़ साफ करना शुरू किया। ज़मीन को बसने लायक बनाना शुरू किया। जब जंगल साफ करने लगे तो फॉरेस्ट विभाग वाले आ कर परेशान करने लगे। फिर हम लोग सीसीएल ऑफिस गए। सीसीएल ने फॉरेस्ट विभाग वालों को कहा कि इन लोगों को यहाँ बसने दीजिए। कम्पनी ने इनको विस्थापित किया है और बदले में कोई जगह नहीं दी है तो यह लोग कहाँ जाएँगे ? ऐसा कहा तो वो मान गए। हम यहीं बस गए। जो लोग इधर-उधर चले गए थे वो भी यहीं आ गए।

लेकिन सीसीएल ने कोई व्यवस्था नहीं की है। हम लोगों ने खुद लाइन खींच कर बिजली का प्रबन्ध किया है। हाँ, विश्व बैंक ने सुविधा के नाम पर रोड और पानी की टंकी दी है। कहने के लिए तो विश्व बैंक ने ट्रेनिंग सेंटर भी खोला है लेकिन 6-6 महीने में वहाँ सीखने का चांस मिलता है। जब ऊपर के अधिकारियों को रिपोर्ट देने का वक्त आता है तो काम शुरू कर देते हैं। हम ही लोग ने जा जा कर माँग की कि एक कुआँ, मिनी डैम और

चापाकल होना चाहिए, तो उसकी मंजूरी हो गई है। एक क्लब भी खोला है और पूजा पाठ के लिए मंदिर भी बना दिया है। यहाँ बानसिंह की छपरी भी है और देवी माँ का मंदिर भी, दोनों आमने सामने हैं। लेकिन बानसिंह को यहाँ लाने का खर्चा हमको सीसीएल ने नहीं दिया है। हम खुद ही उठा कर लाए हैं।

यहाँ सीसीएल ने रोज़गार की भी कोई व्यवस्था नहीं की है। थोड़ा बहुत जो विश्वबैंक ने किया है वह काफी नहीं है। संगठित होने से ही कोई रोज़गार संबंधी आंदोलन किया जा सकता है। अकेले हम अगर सीसीएल ऑफिस जाते हैं तो कोई हम पर ध्यान नहीं देता। चार लड़के भी अगर साथ चलें तो वह लोग ध्यान देने लगेंगे। यहाँ बाहरी आदमी सब ठेकेदारी कर के लूट के सब कुछ ले जा रहे हैं और हमारे आदमी भूखे मर रहे हैं। एकमत नहीं है। 3-4 वर्ष पहले तक हमें मुख्य आदमी होने के नाते कुछ सहयोग मिलता था। अब वो भी नहीं है। यही सब के चलते हम कमजोर पड़ जाते हैं। परदेसी लोग हमारी बेटी पतोहू को देख कर मन में पाप करते हैं । मीठी मीठी बात कर के हमसे दोस्ती बनाते है, फिर हमारी ही थाली में से भात लूट कर ले जाते हैं। यह सब हम सबके संगठन में कमजोरी के कारण से ही हो रहा है।

खदान आने के बाद से समाज बदल गया

पहले सारा गाँव एक होता था। किसी की कोई समस्या हो सब मिलकर सुलझाते थे। किसी के घर में शादी हो, सारा गाँव मिल कर काम करता था। हर घर से 1-2 सदस्य बारात में जाते थे। घर का मालिक मजबूत नहीं भी होता तो भी उसके गाँव वाले, रिश्तेदार मिल जुल कर सब काम निबटा देते थे। हर पर्व-त्यौहार पर कितनी देर हम लोग ढोल-मंदर बजा कर अखाड़े में झूमर-जादौरा खेलते थे। लेकिन अब हमारे पर्व-त्यौहार-संस्कृति सब कुछ खत्म हो गई है। अब के लड़के खाली डिस्को जानते हैं। अखाड़े में मीटिंग के लिए बुलाओ तो आना नहीं चाहते। यह सब से हमारे दिल में गहरा दुख होता है।

हमारी खेती-बाड़ी, पुराना रहन-सहन, एक साथ उठना बैठना, सब खदान के आने

से खत्म हो गया है। अब पुराने आदमी भी नहीं रहे जो कुछ कोई समझा सकते। अब के लड़के लोग की पुरानी रीति-रिवाज में कोई रूचि नहीं है। पहले भी हम लोग दारू बनाते थे और मजे से खाते पीते थे। कोई नुकसान नहीं होता था। लेकिन आजकल सब जगह यही सुनने को मिलता है कि फलाँ आदमी दारू पी कर मर गया, फलाँ को टी.बी हो गई, फलाँ का दिमाग खराब हो गया। जिनको हमने गोद में खिलाया है वो हमसे बूढ़े दिखाई देते हैं। सब लोग बेरोज़गारी में शराब पी पी कर बर्बाद हो रहे हैं।

अब लोगों के शरीरों में ताकत नहीं रह गई। यह जो यूरिया सल्फ़ेट निकला है यह सब उसी का परिणाम है। पहले गोबर की खाद से ऐसा नहीं होता था। नवजात बच्चा पैदा ही कमजोर होता है अब। पहले जब हम छोटे बच्चे थे, दो चार लाठी खा लेते थे। अब के बच्चे को थप्पड़ भी मारो तो वह मर जाएगा। पर हम गोबर खाद का अनाज खाए हैं। कितना बड़ा बड़ा बोझा उठा सकते थे। ये सल्फेट वाले नहीं कर सकते। हमने कंद मूल खा कर ताकत बनाई है। बाड़ीसिमर में हमारे 20 महुआ के पेड़ थे। हम पूरे दिन भुना महुआ खा कर गुजारा कर लेते थे। आज कल के तो बिना खाना खाए चल नहीं सकते।

अगर सीसीएल नहीं आती तो यह सब कुछ नहीं जाता। जंगल, पहाड़, खेती-बाड़ी, जड़ी-बूटी, सब कुछ होता। पर हम कर क्या सकते हैं ? ज़मीन जो चली गई वह वापस तो आएगी नहीं लेकिन हमें यह ज़रूर करना होगा कि हम संगठित रहें। सब गाँव वाले बैठकों में हिस्सा लेंगे, मुख्य आदमी का सहयोग करेंगे, एक दूसरे को जानकारी देंगे और एकमत हो कर सीसीएल पर दबाव डालेंगे तो मुआवज़ा भी ठीक मिलेगा और सामाजिक व्यवस्था भी ठीक होगी। आने वाली पीढ़ी में भी सुधार आएगा। आपसी मतभेद रहेगा तो अपना भाईलोग ही समाज को गिरा देंगे। संगठन रहेगा तो हम लोग ही आगे बढ़ेंगे और प्रगति करेंगे।